विशद
व्रत, पूजन
एवं
कथा, जाप्य संग्रह

aM{`Vm/g§H$bZ

प.पू. आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज

अनुक्रमणिका

मुक्तावली व्रत पूजन	–	5	नवलब्धि व्रत		
रोहिणी व्रत पूजा	–	13	(नवकेवललब्धि व्रत)	–	84
श्री रविव्रत पूजा	–	25	कल्याण मन्दिर पूजन	–	85
जिनगुण सम्पत्ति पूजा	–	33	चैत्य वंदना	–	91
कर्मदहन पूजन	–	46	समाधि भक्ति	–	92
भक्तामर पूजा	–	55	भजन	–	94
एकीभाव स्तोत्र पूजन	–	71	क्षमा वंदना	–	95
महामंत्र णमोकार पूजा	–	79	सुगन्ध दशमी व्रत विधि	–	96

कृति – विशद व्रत पूजन एवं कथा, जाप्य संग्रह

कृतिकार – प.पू. साहित्य रत्नाकर, क्षमामूर्ति
आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज

संस्करण – प्रथम-2013 ● प्रतियाँ :1000

संकलन – मुनि श्री 108 विशालसागरजी महाराज

सहयोग – क्षुल्लक श्री 105 विदर्शसागरजी, क्षुल्लक श्री विसोमसागरजी

संपादन – ब्र. ज्योति दीदी (9829076085) आस्था दीदी, सपना दीदी

संयोजन – किरण दीदी, आरती दीदी, उमा दीदी
मो. 9829127533

प्राप्ति स्थल – 1 जैन सरोवर समिति, निर्मलकुमार गोधा,
2142, निर्मल निकुंज, रेडियो मार्केट
मनिहारों का रास्ता, जयपुर
फोन : 0141-2319907 (घर) मो.: 9414812008

2. श्री राजेशकुमार जैन ठेकेदार
ए-107, बुध विहार, अलवर मो.: 9414016566

3. विशद साहित्य केन्द्र
C/o श्री दिगम्बर जैन मंदिर, कुआँ वाला जैनपुरी
रेवाड़ी (हरियाणा) प्रधान ● मो.: 09416882301

4. लाल मंदिर, चाँदनी चौक, दिल्ली

मूल्य – सदुपयोग

–: अर्थ सौजन्य : –

श्रीमती मिथलेश जैन ध.प. श्री महेशचन्द्र जैन
पुत्र/पुत्रवधू प्रवीण-सपना, अरुण-रेखा जैन
अतुल-शिखा जैन
एफ-204, मंगल बाजार, लक्ष्मी नगर दिल्ली-92

मुद्रक : **राजू ग्राफिक आर्ट** , जयपुर ● फोन : 2313339, मो.: 9829050791

आशीर्वाद

वरं व्रत्तै परं देवं, नाव्रत्तैः व्रत नारकम्। छायातपस्थयो भेंदः प्रतिपालयतोमहान्।।

आचार्य पूज्यपाद स्वामी ने इष्टोपदेश ग्रंथ में व्रत का सबसे बड़ा महत्त्व बताते हुए कहा है। जिस प्रकार एक व्यक्ति धूप में खड़ा तप कर रहा है। वह कष्ट का अनुभव करता है, परन्तु जब वह छाया में पहुँच जाता है तो वह आनन्द का अनुभव करता है। उसी प्रकार व्रतहीन मानव का जीवन अनेक कष्टों का, अनेक कर्मों का आमंत्रण है। यदि वह व्यक्ति व्रत की छाया में आ जाता है तो वह अनेक कष्टों और अशुभ कर्म के आश्रव से बच जाता है।

व्रतों का पालन कैसे करना चाहिए यह जैनागम से ज्ञात होता है। चरणानुयोग में व्रतों का आद्योपान्तकथन किया गया है। इसके साथ ही समय-समय पर व्रत किए जाते हैं। जिसकी अलग-अलग विधि तथा तिथियाँ होती हैं और उसके जाप्य मंत्र भी अलग होते हैं जो प्रायः व्रत करने वालों को समय पर उपलब्ध नहीं हो पाते हैं। जिसके अभाव में लोग व्रत करना भी चाहें तो भी नहीं कर पाते हैं।

श्रीमती मिथलेश जैन धर्मपत्नी **श्री महेश चन्द्र जैन** ने जो मुक्तावली के व्रत किए उसके उद्यापन पर व्रत, पूजन, जाप्य मंत्र एवं कथा की पुस्तक प्रकाशित कराने का भाव बनाया है। जिससे लोग आसानी से व्रतों में उसकी पूजन, जाप्य एवं उसका महत्त्व समझ सकें और अपने जीवन में धर्म के प्रभाव से पुण्य का संचय करें।

इस भावना से उनके पुत्र **श्री अरुण कुमार जैन एवं पुत्रवधू रेखा जैन, श्री अतुल जैन-शिखा जैन** के द्वारा यह व्रत विधि कथा एवं जाप्य संग्रह पुस्तक का प्रकाशन कराया जा रहा है। जो आशीर्वाद के पात्र हैं तथा इस पुस्तक को प्राप्त करके अधिक से अधिक लोग व्रत पूजन करके अपने जीवन में पुण्य का संचय करें इस प्रकार से लोग अधिक से अधिक धर्म के राही बनें और अपना जीवन मंगलमय बनायें।

पाते हैं सौभाग्य जो, व्रत करते हैं जीव। शिवपथ पाने के लिए, पाते पुण्य अतीव।।

'पुण्य फला अर्हन्ता' पुण्य फल से अरहन्त पद की प्राप्ति होती है। आगम के इस कथन को ध्यान में रखते हुए सभी भव्य जीव व्रत करते हुए व्रती और महाव्रती बनकर मोक्ष के राही बनें।

करें व्रत जीव जो भाई, विशद वह पुण्य पाते हैं।
विरक्ति प्राप्त करते वह, उन्हें ना भोग भाते हैं।।
सफल जीवन बनाते वह, व्रतों को धारकर के जो।
कर्म की शृंखला अपनी, काटकर मोक्ष जाते हैं।।

-आचार्य विशदसागर
शकरपुर, दिल्ली (मंगलवार, 6-8-2013)

भक्ति से मुक्ति

अनाधि निधन जैन धर्म में व्रतों के माध्यम से शक्ति के अनुसार तपश्चरण करके आत्मशक्ति को वृद्धिंगत करने का विधान है। इसके अन्तर्गत अनेक प्रकार के महिमाशाली व्रत आते हैं। जिनको विधिपूर्वक करने से तद्नुरूप फल की प्राप्ति अवश्य होती है। जैसे 'अष्टाह्निका व्रत' यह वर्ष में तीन बार आषाढ़, कार्तिक, फाल्गुन मास के शुक्ल पक्ष की अष्टमी से पूर्णिमा तिथि तक किया जाता है। इन व्रतों को करने से हजारों, लाखों उपवास का फल मिलता है। अर्थात् सप्तमी को एकाशन करके अष्टमी को उपवास करने से 10 लाख उपवास का फल मिलता है, पुनः नवमी को एकाशन करके दशमी को उपवास करने पर 60 लाख उपवास का फल मिलता है। इस प्रकार पूर्णिमा के अंतिम उपवास में 3 करोड़ 5 लाख उपवास का फल होता है। कोई भी व्यक्ति अपने जीवन में इतने लाखों, करोड़ों उपवास तो कर नहीं सकता है। अतः इस व्रत को करके इन उपवासों का पुण्य अवश्य प्राप्त किया जा सकता है।

इसी क्रम में रविव्रत, णमोकार व्रत, भक्तामर, सोलहकारण, दशलक्षण, रत्नत्रय, रोहिणी व्रत आदि अनेकों व्रत वर्तमान में जैन समाज में श्रावक-श्राविकाओं के द्वारा किये जा रहे हैं। व्रतों को करने से अपार पुण्य का संचय और कालान्तर में स्वर्ग और मोक्ष पद की प्राप्ति होती है। व्रत की उत्तम विधि उपवास, मध्यम अल्पाहार और जघन्य एकाशन करना है। व्रत के दिन प्रतिमा का अभिषेक, समुच्चय पूजा के साथ व्रत सम्बन्धी पूजा करके क्रमशः व्रत का पृथक्-पृथक् व समुच्चय जाप करना चाहिए। उद्यापन पर वृहद् स्तर पर व्रत सम्बन्धी पूजा विधान करना चाहिए।

व्रतों को गुरु साक्षी में ग्रहण करना चाहिए व गुरु की साक्षी में व्रतों का उद्यापन करना चाहिए। जो स्वयं व्रतों को ग्रहण करता है और स्वयं ही व्रतों को छोड़ देता है उसके व्रत निष्फल हो जाते हैं। गुरु से यथाविधि ग्रहण किये गये व्रत नियम ही सभी कार्यों को सिद्ध कर सकते हैं। जैसे एकलव्य द्रोणाचार्य की मिट्टी की मूर्ति बनाकर उसे गुरु मानकर विद्या साधना करता था। उसे इस गुरु कृपा से विद्याएँ सिद्ध हो गई थीं। इस प्रकार गुरु की कृपा से ही व्रत सफल होते हैं। बिना गुरु की भावना के ग्रहण किये गये व्रत कुछ भी कार्यकारी नहीं हो सकते हैं।

अतएव गुरु के मुख से व्रतों को ग्रहण करना चाहिए तथा उन्हीं की साक्षीपूर्वक व्रतों को छोड़ना चाहिए। यदि गुरु न मिले तो किसी तत्त्वज्ञ विद्वान्, ब्रह्मचारी, व्रती या अन्य धर्मात्मा से व्रत लेना चाहिए तथा व्रतों को गुरु या विद्वान् के समक्ष छोड़ना चाहिए। यदि गुरु, विद्वान्, ब्रह्मचारी आदि का भी सानिध्य न हो सके तो जिनेन्द्र भगवान की प्रतिमा के सामने व्रत ग्रहण करने तथा छोड़ने चाहिए। बिना साक्ष्य के व्रतों का यथार्थ फल प्राप्त नहीं होता है।

इस व्रत, पूजा, कथा संग्रह पुस्तक में प.पू. आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज द्वारा रचित व्रतों की पूजाओं का आर्यिका श्री ज्ञानमति माताजी द्वारा रचित व्रत संग्रह से कुछ कथाओं व मंत्रों का संघस्थ ब्र. ज्योति दीदी ने संग्रह किया है।

यथायोग्य एवं यथाशक्ति व्रतों का पालन कर उच्चगति को प्राप्त करें।

- मुनि विशालसागर (संघस्थ आचार्य श्री विशदसागरजी महाराज)
वर्षायोग-2013, बी-40, शकरपुर जैन मंदिर-दिल्ली

मुक्तावली व्रत पूजन

(स्थापना)

वसूपूज्य नृप चम्पापुर के, रानी विजया हुई महान्।
महाशुक्र से चयकर जन्में, जिनगृह वासुपूज्य भगवान।।
लाख बहत्तर वर्ष की आयु, लाल रंग तन का शुभकार।
सत्तर धनुष रही ऊँचाई, वंश इक्ष्वाकु मंगलकार।।

दोहा- मुक्तावलि व्रत के रहे, प्रभु आप आराध्य।
आह्वानन् करते हृदय, सफल होय मम साध्य।।

ॐ ह्रीं मुक्तावली व्रताराध्य श्री वासुपूज्य जिनेन्द्र ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(शम्भू छंद)

सम्यक् ज्ञान नीर को पाकर, जन्म जरादिक रोग हरें।
अजर अमर अविनाशी पद पा, चेतन गुण का भोग करें।।
मुक्तावली व्रत की पूजा कर, जिनवर के गुण गाते हैं।
वासुपूज्य जिन के चरणों हम, सादर शीश झुकाते हैं।।1।।

ॐ ह्रीं मुक्तावली व्रताराध्य श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक् श्रद्धा का चन्दन ले, भवाताप ज्वर नाश करें।
सिद्ध शुद्ध अविनाशी निर्मल, चेतन तत्त्व प्रकाश करें।।
मुक्तावली व्रत की पूजा कर, जिनवर के गुण गाते हैं।
वासुपूज्य जिन के चरणों हम, सादर शीश झुकाते हैं।।2।।

ॐ ह्रीं मुक्तावली व्रताराध्य श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक् चारित के अक्षत से, अक्षय निधि पाने आये।
भव सिन्धू से पार हुए जिन, गुण पाकर शिव सुख पाये।।

मुक्तावली व्रत की पूजा कर, जिनवर के गुण गाते हैं।
वासुपूज्य जिन के चरणों हम, सादर शीश झुकाते हैं।।3।।

ॐ ह्रीं मुक्तावली व्रताराध्य श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

रत्नात्रय के पुष्प चढ़ाकर, शील सुगुण हम प्रगटाएँ।
कामबाण विध्वंस करें अब, महाशील पति बन जाएँ।।
मुक्तावली व्रत की पूजा कर, जिनवर के गुण गाते हैं।
वासुपूज्य जिन के चरणों हम, सादर शीश झुकाते हैं।।4।।

ॐ ह्रीं मुक्तावली व्रताराध्य श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सम्यक् तपमय ताप के चरु से, पूजा करके हर्षायें।
नाश करें हम क्षुधा वेदना, परम तृप्ति उर में पायें।।
मुक्तावली व्रत की पूजा कर, जिनवर के गुण गाते हैं।
वासुपूज्य जिन के चरणों हम, सादर शीश झुकाते हैं।।5।।

ॐ ह्रीं मुक्तावली व्रताराध्य श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सद् आराधना के दीपक से, सम्यक् ज्ञान विकाश करें,
मोह कर्म करके विनाश हम, केवलज्ञान प्रकाश करें।।
मुक्तावली व्रत की पूजा कर, जिनवर के गुण गाते हैं।
वासुपूज्य जिन के चरणों हम, सादर शीश झुकाते हैं।।6।।

ॐ ह्रीं मुक्तावली व्रताराध्य श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

दश धर्मों की धूप बनाकर, ध्यान अग्नि में दहन करें।
अष्ट कर्म परिपूर्ण नाशकर, सिद्ध सुपद को ग्रहण करें।।
मुक्तावली व्रत की पूजा कर, जिनवर के गुण गाते हैं।
वासुपूज्य जिन के चरणों हम, सादर शीश झुकाते हैं।।7।।

ॐ ह्रीं मुक्तावली व्रताराध्य श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय अष्टकर्मविध्वंशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तम संयम के फल ले हम, पूजा कर महिमा गाएँ।
अजर अमर पद पाकर के अब, सिद्ध शिला पर वश जाएँ।।
मुक्तावली व्रत की पूजा कर, जिनवर के गुण गाते हैं।
वासुपूज्य जिन के चरणों हम, सादर शीश झुकाते हैं।।8।।

ॐ ह्रीं मुक्तावली व्रताराध्य श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट द्रव्य का अर्घ्य चढ़ाकर, अष्टम वसुधा को पाएँ।
अष्ट गुणों की सिद्धी पाने, जिन चरणों में सिरनाएँ।।
मुक्तावली व्रत की पूजा कर, जिनवर के गुण गाते हैं।
वासुपूज्य जिन के चरणों हम, सादर शीश झुकाते हैं।।9।।

ॐ ह्रीं मुक्तावली व्रताराध्य श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– प्रासुक करके नीर यह, देने जल की धार।
लाए हैं हम भाव से, मिटे भ्रमण संसार।। शान्तये शांतिधारा..

दोहा– पुष्पों से पुष्पाञ्जली, करते हैं हम आज।
सुख–शांति सौभाग्यमय, होवे सकल समाज।। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत

जयमाला

दोहा– वसुपूज्य के सुत कहे, विजयावति के लाल।
व्रताराध्य मुक्तावली, की गाते जयमाल।।

(तर्ज– शेरचाल)

जय–जय जिनेन्द्र वासुपूज्य, देव हमारे।
जय अष्ट कर्म मुक्त रहे, जग में सहारे।।
जय इन्द्र राज जिनके, पद शीश झुकावें।
आके सतेन्द्र चरणों, जयकार लगावें।।
प्रभु दोष अठारह से, विहीन कहे हैं।
जो मूलगुण छियालीस से, संयुक्त रहे हैं।।

प्रभु आत्म ध्यान करके, चउ कर्म नशाए।
केवल्य ज्ञान दर्शन, सुख वीर्य जगाए।।
चम्पापुरी में सोम शर्मा, विप्र कहाया।
पुत्री को जिसकी यौवन के, मद ने सताया।।
मुनिवर को देख जिसके, मन ग्लानि बहु आई।
खोटे वचन के कारण, जो कर्म उपाई।।
कर्मों के फल से जाके, जो नरकों में गई।
आयु को पूर्ण करके, दुर्गन्धा जो भाई।।
तिरस्कार जिसका भारी, लोगों ने तब किया।
जूँठन को खाके जिसने, जीवन स्वयं जिया।।
मुनिराज का सु दर्शन जब, उसके लिए मिला।
करके गुरु का दर्शन मन, उसका तव खिला।।
आता सभी को धर्म याद, कष्ट जब पढ़ें।
होके स्वयं लाचार धर्म, मार्ग पे बढ़ें।।
मैटो गुरु जी कष्ट सही, राह दिखाओ।
संसार पार मेरी, गुरु नाव लगाओ।।
मुक्तावली का व्रत तव, गुरुदेव ने दिया।
होके प्रसन्न विधि से व्रत, पूर्ण यह किया।।
कर स्त्रीलिंग छेदन वह, स्वर्ग में गई।
सौधर्म स्वर्ग में जा, देवेन्द्र जो भई।।
आयु को पूर्ण करके शुभ, जन्म फिर लिया।
मथुरा में राज्य श्रीधर, राजा ने जब किया।।
ब्राह्मण के घर में पद्मारथ, नाम को पाया।
क्रीड़ा के हेतु वन में वह, एक दिन आया।।
दर्शन मुनी के उसने तब, वन में जा किए।
उपदेश पद्मारथ को, मुनिराज तब दिए।।
चम्पापुरी में वासुपूज्य, ज्ञान जगाए।
प्रभु का समवशरण तब, इन्द्र बनाए।।

सुनकर के विप्र प्रभु के, दर्शन को चल दिया।
वन्दन प्रभू के चरणों, जो भाव से किया।।
सुनके प्रभू की वाणी, वैराग्य जगाया।
संयम को धारकर के गणधर सुपद पाया।।
फिर ज्ञान 'विशद' पाके, सब कर्म नशाए।
बन सिद्ध प्रभु जाके, शिवधाम बनाए।।

दोहा– मुक्तावलि व्रत की रही, महिमा अपरम्पार।
भव्य जीव व्रत धारकर, पावें भव से पार।।

ॐ ह्रीं मुक्तावली व्रताराध्य श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्त्ये जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– भक्त चरण में कर रहे, वन्दन द्वय कर जोर।
यही भावना है 'विशद', बढ़े मोक्ष की ओर।।

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

मुक्तावली व्रत की कथा

दोहा– ऋषभनाथ के पद नमों, भविसरोजरवि जान।
मुक्तावली व्रत की कथा, कहूँ सुनो धरि ध्यान।।

चौपाई

मगधदेश परधान, तामैं राजगृही शुभ थान।
राज्य करे तहं श्रेनिक राय, धर्मवन्त सबको सुखदाय।।
तां गृह नारि चेलना सती, धर्मशीलपूरणगुणवती।
इक दिन समोशरण महावीर, आयो विपुलाचल पर धीर।।
सुन नृप अति आनन्दित भयो, कुटुम सहित बन्धन को गयो।
पूजा कर बैठ्यो सुख पाय, हाथ जोड़कर अर्ज कराय।।
हे प्रभु मुक्तावलि व्रत कहो, यह कर कोने क्या फल लहो।
तब गौतम बोले हर्षाय, सुनो कथा मुक्तावलि राय।।

याही जम्बूद्वीप मझार, भरत क्षेत्र दक्षिण निशि सार।
अंग देश सोहे रमणीक, नगर बसे चम्पापुर ठीक।।
नगर मध्य एक ब्राह्मण बसै, नाम सोमशर्मा तसु लसे।
ता गृह एक सुता जो भई, यौवन मदकर पूरण भई।।
इक दिन देखे श्री गुरु जबै, नग्न गात लखि नन्दी तबै।
अति खोटे दुर्वचन कहाय, बहुत हि ग्लानि चित्त में लाय।।
ता करि महापाप बाँधियो, आयु वितीते मरण जु कियो।
नरक जाय नाना दुःख सहे, छेदन भेदन जाय न कहे।।
नरक आयु पूरी कर सोई, भव भ्रम द्विजगृह पुत्री होय।
निर्मामिका पड़य तिहँ नाम, अति दुर्गंधा देह निकाम।।
कोई ढिंग आवै नहिं तहाँ, क्रमकर बड़ी भई सो वहाँ।
अन्नपान कर दुखित महा, झूटन भखै कष्ट अतिलहा।।
एक दिवस देखे मुनि देय, कर परनाम विनय शिरनाय।
कौन पाप मैं कीन्हों देव, मैं पाया अति दुःख अभेव।।
तब मुनिवर पूरब भव कहे, गुरु की निन्दासो दुख लहै।
तब दुर्गंधा जोड़े हाथ, ऐसो व्रत दीजो मोय नाथ।।
जासो रोग शोक सब जाय, उत्तम भव पाऊँ गुरुराय।
तब श्री गुरु बोले, हर्षाय मुक्तावलि व्रत कर मन लाय।।
तासों र्द पाप जर जाय, सुख सम्पत्ति मिले अधिकाय।
तब दुर्गन्धा कहे विचार, कौन भाँति कीजे व्रत सार।।
तब मुनिवर इम वचन कहाय, सुनो भेद व्रत को चित लाय।
भादो सुदि सप्तमी दिन होय, ता दिन व्रत कीजे अब लोय।।
प्रातः समय जिनमन्दिर जाय, पूजा कथा सुनो मनलाय।
सब आरम्भ तजो दिनमान, संयम शील सजो गुण खान।।
भोर ये जिन दर्शन करो, शुद्ध अशन कीजे तब खरो।
दूजो व्रत पूरब व्रत करो, आश्विन वदि छटि पापजु हरो।।
तीजे व्रत कीजे उर धार, आश्विन वदि तेरसि सुखकार।
कर उपवास पाल गुण रसी, चौथी अश्विन सुदि ग्यारसी।।

पंचम ब्रत कीजे मन लाय, कार्तिक वदि वारसि सुख दाय।
फिर छटवां उपवास सुजान, कार्तिक शुक्ल तीज गुण खान।।
सप्तम व्रत जिनवर ने कह्यो, कार्तिक सुदि ग्यारसि शुभ लह्यो।
फेर करो अष्टम व्रत लोय, मगसिर वदि ग्यारसि जब होय।।
नवमो व्रत मगसिर सुदि तीज, ये व्रत धर्मवृक्ष के बीज।
या विधि कर नो वर्ष प्रमान, मन वचकाय शुद्धता ठान।।
जब व्रत पूरण होय निदान, उद्यापन कीजे गुणवान।
श्री जिनवर अभिषेक कराय, करो मांडनो जिनगृह जाय।।
अष्ट प्रकारी पूजा करो, जन्म जन्म के पातक हरो।
यथाशक्ति उपकरण बनाय, श्री जिनधाम चढ़ावो जाय।।
उद्यापन की शक्ति न होय, तो दूनों व्रतकीजे सोय।
सब विधि सुन दुर्गन्धा बाल, मन चेतन व्रत लीना हाल।
गुरुभाषित तिन व्रत यह कियो, पूरब भव अध पानी दियो।।
ता फर नारि लिंग छेदियो, प्रथमहिं स्वर्ग देव सा भयो।
तहां आयु पूरण कर सोय, चलत भयो मथुरा को लोय।।
श्रीधर राजा राज करन्त, ताके सुत उपज्यो गुणवन्त।
नाम पद्मारथ पण्डित भयो, एक दिवस वन क्रीड़ा गयो।।
गुफा मध्य मुनिवर को देख, बन्दन कर सुन धर्म विशेष।।
तहां पूछ मुनिवरसों सोय, तुमसों अधिक प्रभा प्रभु कोय।
तब मुनिवर बोले सुन बाल, वासुपूज्य जिन दीप्ति विशाल।।
चम्पापुर राजैं जिनराज, तेज पुंज प्रभु धर्म जहाज।
यह सुन धर्मविषै चित दयो, समोशरण जिन बन्दन गयो।।
नमस्कार कर दीक्षा लई, तपकर गणधर पदवी भई।
अष्टकर्म इस विधि सों जार, पहुंच्यो शिवपुर सिद्धमझार।।
लखो भव्य वृत का जु प्रभाव, राजभोग भयो शिवपुर राय।
जो नर नारि करै वृत सार, सुर सुख लहिं पावें भवपार।।

मुक्तावली व्रत की जाप

1. **भादो सुदी 7 की जाप–ॐ ह्रीं केवलज्ञानाय नमः।**
2. **कुआॅर वदी 6 की जाप– ॐ ह्रीं सूर्य प्रभाय नमः।**
3. **कुआॅर वदी 13 की जाप– ॐ ह्रीं चन्द्रप्रभाय नमः।**
4. **कुआॅर सुदी 11 की जाप– ॐ ह्रीं कुमाराय नमः।**
5. **कार्तिक वदी 12 की जाप– ॐ ह्रीं नंदीश्वराय नमः।**
6. **कार्तिक सुदी 3 की जाप– ॐ ह्रीं सर्व सिद्धेभ्यो नमः।**
7. **कार्तिक सुदी 9 की जाप– ॐ ह्रीं प्रातिहार्यै नमः।**
8. **अगहन वदी 1 की जाप– ॐ ह्रीं प्रतेद्रिआयै नमः।**
9. **अगहन सुदी 3 की जाप– ॐ ह्रीं अनन्तनाथाय नमः।**

मुक्तावली व्रत उद्यापन विधि

व्रत ग्रहण एवं उद्यापन करने का संकल्प कायोत्सर्ग– ॐ जय–जय–जय ! नमोस्तु, नमोस्तु, नमोस्तु। णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं, णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं। ॐ ह्रीं श्री भावपूजा, भाव वंदना, त्रिकाल पूजा, त्रिकाल वंदना कर श्री पञ्च परमेष्ठी, जिनधर्म, जिनआगम, जिनचैत्य, जिन चैत्यालय इन नव–देवताओं की साक्षीपूर्वक, आत्मकल्याण के निमित्त व्रत का नाम ग्रहण या उद्यापन करने का संकल्प करता हूँ/करती हूँ और समीचीनतया पालने हेतू मन–वचन–काय से मैं (नाम) सत्संगति की कामना करता हूँ/करती हूँ। ॐ शान्ति रस्तु, तुष्टि रस्तु, पुष्टि रस्तु कान्ति रस्तु, कल्याण मस्तु नमः।

उदक–चंदन–तंदुल पुष्पकैः चरू सुदीप सुधूप फलार्घकैः।
धवल–मंगल–गान–रवाकुले जिनगृहे जिननाथ महंयजे।।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादि महावीरान्त चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्यपद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

– मुनि विशालसागर

रोहिणी व्रत पूजा

स्थापना *(दोहा)*

रोहिणी नाम नक्षत्र का, आता है प्रति मास।
श्रेष्ठ रोहिणी व्रत करें, करके शुभ उपवास।।
जिनाभिषेक पूजन करें, स्वाध्याय भी साथ।
आह्वानन जिनदेव का, करें झुकाकर माथ।।
वासुपूज्य भगवान का, किए हृदय से ध्यान।
जीवन सुखमय हो विशद, पाएँगे निर्वाण।।

ॐ ह्रीं रोहिणी व्रत आराध्य श्री वासुपूज्य जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(शम्भू छंद)

हमने प्रभु काल अनादी से, निज के स्वरूप को ना जाना।
निर्मल जल सम चेतन सुन्दर, शुभ यह रहस्य न पहिचाना।।
अब श्रेष्ठ रोहिणी व्रत करके, हम ज्ञान जगाने आए हैं।
श्री वासुपूज्य प्रभु के चरणों, हम शीश झुकाने आए हैं।।1।।

ॐ ह्रीं रोहिणीव्रत आराध्य श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

हमको भव ताप जलाता है, हम अब तक जान न पाए हैं।
शीतल स्वरूप पाने अनुपम, चंदन यह घिसकर लाए हैं।।
अब श्रेष्ठ रोहिणी व्रत करके, हम ज्ञान जगाने आए हैं।
श्री वासुपूज्य प्रभु के चरणों, हम शीश झुकाने आए हैं।।2।।

ॐ ह्रीं रोहिणीव्रत आराध्य श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं निर्व.स्वाहा।

अक्षय पद बिन क्षत विक्षत हुए, भौतिक पदवी में उलझाए।
अब अक्षय पद पाने हेतू, यह पुञ्ज सुअक्षत के लाए।।
अब श्रेष्ठ रोहिणी व्रत करके, हम ज्ञान जगाने आए हैं।
श्री वासुपूज्य प्रभु के चरणों, हम शीश झुकाने आए हैं।।3।।

ॐ ह्रीं रोहिणीव्रत आराध्य श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्व.स्वाहा।

है पाप पंक यह काम अरी, चक्कर में इसके भरमाए।
उस काम अरी के नाश हेतु, यह पुष्प मनोहर हम लाए।।
अब श्रेष्ठ रोहिणी व्रत करके, हम ज्ञान जगाने आए हैं।
श्री वासुपूज्य प्रभु के चरणों, हम शीश झुकाने आए हैं।।4।।

ॐ ह्रीं रोहिणीव्रत आराध्य श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्व.स्वाहा।

इस संख्यातीत लोक का हमने, अन्न आज तक खाया है।
अब क्षुधा रोग हम पूर्ण नशाएँ, मन में भाव समाया है।।
अब श्रेष्ठ रोहिणी व्रत करके, हम ज्ञान जगाने आए हैं।
श्री वासुपूज्य प्रभु के चरणों, हम शीश झुकाने आए हैं।।5।।

ॐ ह्रीं रोहिणीव्रत आराध्य श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्व. स्वाहा।

हम पर भावों के प्रबल वेग, में निश दिन बहते आए हैं।
अब मोह कर्म के नाश हेतू, यह दीप जलाने लाए हैं।।
अब श्रेष्ठ रोहिणी व्रत करके, हम ज्ञान जगाने आए हैं।
श्री वासुपूज्य प्रभु के चरणों, हम शीश झुकाने आए हैं।।6।।

ॐ ह्रीं रोहिणीव्रत आराध्य श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्व. स्वाहा।

सुख दुख जीवन की आशा में, सदियों से भटकते आए हैं।
अब पूर्ण नाश हो कर्मों का, यह धूप जलाने लाए हैं।।
अब श्रेष्ठ रोहिणी व्रत करके, हम ज्ञान जगाने आए हैं।
श्री वासुपूज्य प्रभु के चरणों, हम शीश झुकाने आए हैं।।7।।

ॐ ह्रीं रोहिणीव्रत आराध्य श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अनगिनते कर्म किए हमने, निज को पहचान न पाए हैं।
अब मोक्ष महाफल पाने को, फल आज चढ़ाने लाए हैं।।
अब श्रेष्ठ रोहिणी व्रत करके, हम ज्ञान जगाने आए हैं।
श्री वासुपूज्य प्रभु के चरणों, हम शीश झुकाने आए हैं।।8।।

ॐ ह्रीं रोहिणीव्रत आराध्य श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्व. स्वाहा।

कर्मों का रंग चढ़ा भारी, हम निज को जान न पाए हैं।
कर्मों की चादर काट सकें, यह अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।।
अब श्रेष्ठ रोहिणी व्रत करके, हम ज्ञान जगाने आए हैं।
श्री वासुपूज्य प्रभु के चरणों, हम शीश झुकाने आए हैं ।।9।।

ॐ ह्रीं रोहिणीव्रत आराध्य श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्व. स्वाहा।

दोहा– **शांतीधारा दे रहे, 'विशद' भाव के साथ।**
शांती हमको हो प्रभु, झुका चरण में माथ।। शांतये शांतिधारा

पुष्पाञ्जलि करने 'विशद', लाए सुरभित फूल।
पूजा करते भाव से, पाने भव का कूल।। पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

जयमाला

दोहा– **श्रेष्ठ रोहिणी व्रत करें, करके प्रभु का ध्यान।**
जयमाला गाए शुभम्, उसका हो कल्याण।।

(चौपाई छंद)

अंग देश भारत का जानो, चम्पापुर नगरी शुभ मानो।
माधव भूप वहाँ का भाई, रानी लक्ष्मीमति शुभ गाई।।
सात पुत्र उसके शुभ जानो, कन्या श्रेष्ठ रोहिणी मानो।
नगर हस्तिनापुर का स्वामी, हुआ वीतशोका शुभ नामी।।
विद्युतश्रवा ने सुत उपजाया, नाम अशोक पुत्र ने पाया।
चम्पापुर नगरी में आया, रोहिणी से शुभ ब्याह रचाया।।
चारण ऋद्धीधर मुनि आए, रोहिणी का वृत्तान्त सुनाए।
नगर हस्तिनापुर यह गाया, राजा वास्तुपाल कहाया।।
श्रेष्ठ मित्र उसका कहलाया, शुभम् नाम धनमित्र बताया।
दुर्गन्धा पुत्री को पाया, मन में वह भारी अकुलाया।।
वर उसको जब मिल न पाया, व्यसनी से तब ब्याह रचाया।
व्यसनी छोड़ गया निज नारी, दुखी हुई वह मन में भारी।।

अमृतसेन मुनी जब आए, दुर्गन्धा ने दर्शन पाए।
मुनी भवान्तर तब बतलाए, शुभकर पावन वचन सुनाए।।
है सौराष्ट देश शुभकारी, पर्वत पास रहा गिरनारी।
नृप भूपाल नगर का भाई, सिंधुमति रानी शुभ गाई।।
राजा वनक्रीड़ा को आए, उसने मुनि के दर्शन पाए।
राजा तब यह बोले वाणी, चौका आप लगाओ रानी।।
भोग वियोग ने उसे सताया, रोष हृदय में उसके आया।
कड़वी तुम्बी वह बुलवाई, मुनिवर को उसने खिलवाई।।
हुई वेदना तन में भारी, प्राण तजे मुनिवर अविकारी।
नर–नारी सब मिलकर आए, मुनि की अन्तिम क्रिया कराए।।
रानी देश निकाला पाई, कुष्ठ हुआ तन में भी भाई।
उसने भारी दुःख उठाया, मरकर नरक गति को पाया।।
वहाँ से आकर पशु गति पाई, बनी बाद दुर्गन्धा भाई।
मुनिवर ने यह व्रत बतलाया, नाम रोहिणी जिसका गाया।।
रोहिणी नाम नक्षत्र कहाए, एक बार प्रतिमाह में आए।
वर्ष पाँच अरु माह भी जानो, हो उपवास सहित यह मानो।।
फिर व्रत का उद्यापन कीजे, यथायोग्य शुभ दान भी दीजे।
उद्यापन यदि न कर पावें, तो व्रत दूने करते जावें।।
दुर्गन्धा ने यह व्रत भाई, भाव सहित कीन्हा सुखदायी।
अन्त समय संन्यास जो पाई, मरकर के जो स्वर्ग सिधाई।।
वहाँ से चयकर के वह आई, माधव राज की पुत्री भाई।
नृप अशोक के साथ में भाई, माधव ने शादी रचवाई।।
फिर अशोक के भव बतलाए, मुनिवर इस प्रकार से गाए।
वन में भील बना तू भाई, मिथ्या मति तूने जो पाई।।
मुनिवर पर उपसर्ग कराया, मरके सप्तम नरक को पाया।
जन्म मरण का दुख बहु पाया, वणिक के गृह में फिर उपजाया।।

दुर्गन्धित तन तूने पाया, लोगों ने तव दूर भगाया।
मुनि की आज्ञा तूने पाई, रोहिणी व्रत कीन्हा सुखदायी।।
जन्म स्वर्ग में तूने पाया, वहाँ से चयकर के तू आया।
फिर विदेह में तू उपजाया, अर्ककीर्ति चक्री कहलाया।।
वहाँ पे तूने दीक्षाधारी, फिर देवेन्द्र बना शुभकारी।
फिर चयकर पृथ्वी पर आया, तू अशोक राजा कहलाया।।
दोनों चलकर के गृह आए, सुख में अपना समय बिताए।
वासुपूज्य जिनवर कहलाए, समवशरण में शोभा पाए।।
दिव्य देशना सुनकर भाई, दोनों ने शुभ दीक्षा पाई।
किया सुतप बनके अनगारी, मुनि अशोक ने अतिशयकारी।।
अपने सारे कर्म नशाए, अन्त में शिव पदवी को पाए।
रोहिणी आर्यिका स्वर्ग सिधाई, वहाँ पे शुभ सुर पदवी पाई।।
वहाँ से चयकर के फिर आए, उत्तम महाव्रतों को पाए।
अपने सारे कर्म नशाए, अनुक्रम से वह मोक्ष सिधाए।।
किए भाव से जो व्रत भाई, उन सबने शिव पदवी पाई।
भाव से यह व्रत करते जाएँ, 'विशद' सभी वह शिवपद पाएँ।।

दोहा– **श्रेष्ठ रोहिणी व्रत किए, नृपति अशोक महान।**
क्रमशः रानी रोहिणी, ने पाया निर्वाण।।

ॐ ह्रीं रोहिणीव्रत आराध्य श्री वासुपूज्य जिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– **श्रेष्ठ रोहिणी व्रत करें, श्रावक श्रेष्ठ प्रधान।**
स्वर्गों का सुख भोगकर, पावे मोक्ष निधान।।

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

व्रत का पालन करने वाले, अतिशय पुण्य कमाते हैं।
पालन करते हैं यह व्रत जो, अणु व्रती बन जाते हैं।।
महिमा का न पार है व्रत की , जो शिव के सोपान कहे।
व्रत के धारी 'विशद' एक दिन, महाव्रती बन जाते हैं।।

रोहिणी व्रत विधि एवं कथा

जम्बूद्वीप के इसी भरत क्षेत्र में कुरुजांगल देश है, इसमें हस्तिनापुर नाम का सुन्दर नगर है। किसी समय यहाँ वीतशोक राजा राज्य करते थे। इनकी रानी का नाम विद्युत्प्रभा था। इन दोनों के एक अशोक नाम का पुत्र था।

इसी समय अंग देश की चम्पा नगरी में मघवा नाम के राजा राज्य करते थे, इनकी श्रीमती नाम की रानी थी। श्रीमती के आठ पुत्र और रोहिणी नाम की एक कन्या थी। यौवन को प्राप्त हुई रोहिणी के एक समय आष्टाह्निका पर्व में उपवास करके मंदिर में पूजा करके सभा भवन में बैठे हुए माता–पिता को शेषा दी। पिता ने पुत्री को युवती देखकर कुछ क्षण मंत्रशाला में मंत्रियों से मंत्रणा की, पुनः स्वयंवर की व्यवस्था की। स्वयंवर में रोहिणी ने हस्तिनापुर के राजकुमार के गले में वरमाला डाल दी।

कालांतर में वीतशोक महाराज ने दीक्षा ले ली और अशोक महाराज बहुत न्यायनीति से राज्य का संचालन कर रहे थे। रोहिणी महादेवी के आठ पुत्र और चार पुत्रियाँ थीं। किसी समय महाराज अशोक महादेवी रोहिणी के साथ महल की छत पर बैठे हुए विनोद गोष्ठी कर रहे थे। पास में वसंततिलका धाय बैठी हुई थी। जिसकी गोद में रोहिणी का छोटा बालक लोकपाल खेल रहा था। इसी समय रोहिणी ने देखा कि कुछ स्त्रियाँ गली में अपने बालों को बिखेरे हुए एक बालक को लिए छाती, सिर, स्तन और भुजाओं को कूटती–पीटती हुई चिल्ला–चिल्ला कर हो रही हैं। तब रोहिणी ने अपनी वसंततिलका धात्री से कुतूहलवश पूछा– हे माता ! नृत्यकला में विशारद लोग सिग्नटक, भानी, छत्र, रास और दुंबिली इन पाँच प्रकारों के नाटकों का अभिनय करते हैं। भरत महाराज द्वारा प्रणीत इन पाँच प्रकारों के नाटकों के सिवाय ये स्त्रियाँ सादिकुट्टन रूप इस कौनसे नृत्य का अभिनय कर रही है ? इस नाटक में सात स्वर, भाषा और मूर्च्छनाओं का भी पता नहीं चल रहा है। तुम इस नाटक का नाम तो मुझे बताओ।

रोहिणी के इस भोलेपन के प्रश्न को सुनकर धाय बोली–पुत्री ! कुछ दुखी स्त्रियाँ महान् शोक और दुख मना रही हैं।

रोहिणी ने जब धात्री के मुख से 'शोक' और 'दुख' ये शब्द सुने, तब उसने पूछा–अम्ब ! यह बताओ यह 'शोक' और 'दुख' क्या वस्तु है ?

तब धात्री ने रुष्ट होकर जवाब दिया–सुन्दरी ! क्या तुम्हें उन्माद हो गया है ? पाण्डित्य और ऐश्वर्य क्या ऐसा ही होता है ? क्या रूप से पैदा हुआ गर्व यही है ? जो कि तुम 'शोक' और 'दुख' को नहीं जानती हो और रुदन को नाटक–नाटक बक रही हो ? क्या तुमने इसी क्षण जन्म लिया है?

क्रोधपूर्ण बात सुनकर रोहिणी बोली–भद्र ! आप मेरे ऊपर क्रोध मत कीजिए। मैं गन्धर्व विद्या, गणितविद्या, चित्र, अक्षर, स्वर और चौंसठ विज्ञानों तथा बहत्तर कलाओं को ही जानती हूँ। मैंने आज तक इस प्रकार का कलागुण न देखा है और न मुझसे किसी ने कहा है। यह आज मेरे लिए अदृष्ट और अश्रुतपूर्व है। इसीलिए मैंने आपसे यह पूछा है। इसमें अहंकार और पाण्डित्य की कोई बात नहीं।

पुनः धात्री बोली– वत्से ! न यह नाटक का प्रयोग है और न किसी संगीत भाषा का स्वर है किन्तु किसी इष्ट बंधु की मृत्यु से रोने वालों का जो दुःख है, वही शोक कहलाता है।

धात्री की बात सुनकर रोहिणी बोली– भद्रे ! यह ठीक है, परन्तु मैं रोने का भी अर्थ नहीं जानती, सो उसे भी बताइये।

रोहिणी के इस प्रश्न के पूरा होते ही राजा अशोक बोला–प्रिये ! शोक से जो रूदन किया जाता है, उसका अर्थ मैं बतलाता हूँ। इतना कहकर राजा ने लोकपाल कुमार को रोहिणी की गोद से लेकर देखते ही देखते राजभवन के शिखर के नीचे फेंक दिया।

लोकपाल कुमार अशोक वृक्ष की चोटी पर गिरा, उसी समय नगर देवताओं ने आकर दिव्य सिंहासन पर उस बालक को बिठाया और क्षीरसागर से भरे हुए एक सौ कलशों से उसका अभिषेक किया और उसे आभरणों से भूषित कर दिया। अशोक महाराज और रोहिणी ने जैसे ही नीचे नजर डाली तो बहुत ही विस्मित हुए। उस समय सभी लोगों ने इसे रोहिणी के पूर्वकृत पुण्य का ही फल समझा।

हस्तिनापुर के बाहर अशोक वन में अतिभूतितिलक, महाभूतितिलक, विभूतितिलक और अंबरतिलक नामक चार जिनमंदिर क्रमशः चारों दिशाओं में थे। एक बार रूपकुंभ और स्वर्णकुंभ नाम के दो चारण ऋद्धिधारी मुनि विहार करते हुए हस्तिनापुर में आकर पूर्व दिशा के जिनमन्दिर में ठहर गये। वनपाल द्वारा मुनि आगमन का समाचार ज्ञात होने पर परिजन और पुरजन सहित अशोक महाराज मुनिराज की वंदना के लिए वहाँ पहुँचे। वंदना भक्ति के अनंतर राजा ने प्रश्न किया कि हे भगवन् ! मैंने और मेरी पत्नी रोहिणी ने पूर्वजन्म में कौन सा पुण्य विशेष किया है, सो कृपा कर बतलाइये।

मुनिराज ने कहा– हे राजन् ! इसी जम्बूद्वीप के अन्तर्गत भरत क्षेत्र में सौराष्ट्र देश है। इसमें ऊर्जयंतगिरि के पश्चिम में एक गिरि नाम का नगर है। इस नगर के राजा का नाम भूपाल और रानी का नाम स्वरूपा था। राजा के एक गंगदत्त राजश्रेष्ठी था, जिसकी पत्नी का नाम सिंधुमती था, इसे अपने रूप का बहुत ही घमण्ड था। किसी समय राजा के साथ वनक्रीड़ा के लिए जाते हुए गंगदत्त ने नगर में आहारार्थ प्रवेश करते हुए मासोपवासी समाधिगुप्त मुनिराज को देखा और सिंधुमती से बोला–प्रिये ! अपने घर की तरफ जाते हुए मुनिराज को आहार देकर तुम पीछे से आ जाना। सिंधुमती पति की आज्ञा से लौट आई किन्तु मुनिराज के प्रति तीव्र क्रोध भावना हो जाने से उसने कड़वी तूमड़ी का आहार मुनि को दे दिया। मुनिराज ने हमेशा के लिए प्रत्याख्यान ग्रहण कर सल्लेखनापूर्वक शरीर का त्याग कर स्वर्गपद को प्राप्त कर लिया।

जब राजा वन से वापस लौट रहे थे कि विमान में स्थित कर मुनि को ले जाते हुए देखकर मृत्यु का कारण पूछा। तब किसी व्यक्ति ने सारी घटना राजा को सुना दी। उस समय राजा ने सिंधुमती का मस्तक मुण्डवाकर उस पर पाँच बेल बँधवाये, गधे पर बिठाकर उसके अनर्थ की सूचना नगर में दिलाते हुए उसे बाहर निकाल दिया। उसके बाद उसे उदुम्बर कुष्ठ हो गया और भयंकर वेदना से सातवें दिन ही मरकर बाईस सागर पर्यन्त आयु धारण कर छठे नरक में उत्पन्न हुई। यह पापिनी क्रम से सातों ही नरकों में भ्रमण करते हुए कदाचित् तिर्यंचगति में आकर दो बार कुत्ती हुई, सूकरी, शृगाली, चुहिया, गोंच, हथिनी, गधी और गौणिका हुई। अनंतर इसी हस्तिनापुर के राजश्रेष्ठी धनमित्र की पत्नी धनमित्रा से

पूतिगंधा पुत्री के रूप में जन्मी, दुर्गंधा के समान उसके शरीर से भयंकर दुर्गंध आ रही थी जिससे कि उसके पास किसी का भी बैठना कठिन था।

उसी शहर के वसुमित्र सेठ का एक श्रीषेण पुत्र था, जो सप्त व्यसनी था। एक दिन चोरी कर्म से कोतवाल के द्वारा पकड़ा जाकर शहर से बाहर निकाला जा रहा था। उस समय धनमित्र ने कहा कि– श्रीषेण ! यदि तुम मेरी कन्या के साथ विवाह करना मंजूर करो तो मैं तुम्हें बंधन से मुक्त करा सकता हूँ। उसके मंजूर करने पर सेठ ने उसे बंधनमुक्त कराकर उसके साथ अपनी दुर्गन्धा कन्या का विवाह कर दिया। किन्तु विवाह के बाद जैसे–तैसे एक रात दुर्गन्धा के पास बिताकर मारे दुर्गन्ध के घबराकर वह श्रीषेण अन्यत्र भाग गया। बेचारी दुर्गन्धा पुनः पिता के घर पर ही रहते हुए अपनी निंदा करते हुए दिन व्यतीत कर रही थी। एक दिन उसने सुव्रता आर्यिका को अपने पितृगृह में आहार दिया। अनन्तर पिहितास्रव नामक चारणमुनि अमितास्रव मुनिराज के साथ वन में आये। वहाँ पर सभी श्रावकों ने गुरु वंदना करके उपदेश सुना। पूतिगन्धा ने भी गुरु का उपदेश सुनकर कुछ क्षण बाद प्रश्न किया– हे भगवन् ! मैंने पूर्वजन्म में कौनसा पाप किया है जिससे मेरा शरीर महा दुर्गन्धयुक्त है।

मुनिराज ने कहा– पुत्री ! सुनो, तुमने सिंधुमती सेठानी की अवस्था में मुनिराज को कड़वी तूमड़ी का आहार दिया था। उसके फलस्वरूप बहुत काल तक नरक और तिर्यंचों के दुख भोगे हैं और अभी भी पाप के शेष रहने से यह स्थिति हुई है। सारी घटना सुनकर पूतिगंधा ने कहा– हे गुरुदेव ! अब मुझे कोई ऐसा उपाय बतलाइये जिससे पापों का क्षय हो। मुनिराज ने कहा–पुत्री ! अब तुम सभी पापों से मुक्त होने के लिए रोहिणी व्रत करो।

रोहिणी व्रत विधि– जिस दिन चन्द्रमा रोहिणी नक्षत्र में हो उस दिन चतुराहार त्यागकर उपवास करना चाहिए और वासुपूज्य जिनेन्द्र की पूजा करके उनका जाप करना चाहिए। **ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय नमः।** यह रोहिणी नक्षत्र सत्ताईस दिन में आता है। इस तरह सत्ताइसवें दिन उपवास करते हुए पाँच वर्ष और नव दिन में सरसठ उपवास हो जाते हैं। अनन्तर उद्यापन में वासुपूज्य भगवान की महापूजा कराके रोहिणी व्रत संबंधी पुस्तक लिखाकर (छपाकर) और भी अन्य ग्रंथों का भी भव्य जीवों में वितरण करना चाहिए। ध्वजा, कलश, घण्टा, घण्टिका, दर्पण, स्वस्तिक आदि से

मंदिर को भूषित करके महापूजा के अनंतर चतुर्विध संघ को आहार आदि चार प्रकार का दान और आर्यिकाओं के लिए वस्त्र का दान देना चाहिए।

इस तरह गुरुमुख से सुनकर विधिवत् व्रत ग्रहणकर पूतिगंधा ने उसका पालन किया। श्रावक व्रत पालन करते हुए अंत में समाधिपूर्वक मरण करके वह अच्युत नामक सोलहवें स्वर्ग में महादेवी हो गई। वहाँ से च्युत होकर यह तुम्हारी वल्लभा रोहिणी हुई है। राजन् ! यह रोहिणी व्रत का ही माहात्म्य है जो कि यह 'शोक' और 'दुःख' को नहीं समझ पाई है।

अनन्तर मुनिराज ने अशोक से कहा– अब मैं तुम्हारे पूर्वजन्म सुनाता हूँ सो एकाग्रचित्त होकर सुनो।

कलिंग देश के निकट विंध्याचल पर्वत पर अशोक वन में स्तंबकारी और श्वेतकारी नाम के दो मदोन्मत्त हाथी थे। किसी एक दिन नदी में जल के लिए घुसे और आपस में लड़कर मर गये। वे बिलाव और चूहा हुए, पुनः साँप–नेवला और बाज–बगुला हुए, पुनः दोनों ही कबूतर हुए। अनन्तर कनकपुर के राजा सोमप्रभ के पुरोहित सोमभूमि की पत्नी सोमिला से सोमशर्मा और सोमदत्त नाम के पुत्र हो गये।

राजा सोमप्रभ ने सोमभूमि के मरने के बाद पुरोहित पद सोमदत्त नामक उनके छोटे पुत्र को दे दिया। किसी समय सोमदत्त को यह मालूम हुआ कि मेरा बड़ा भाई मेरी पत्नी के साथ दुराचार करता है, तब उसने विरक्त होकर जैनेश्वरी दीक्षा ले ली। इधर राजा ने पुरोहित पद सोमशर्मा को दे दिया।

एक बार सोमप्रभ राजा ने हाथी के लिए शकट देश के अधिपति वसुपाल के साथ युद्ध करने के लिए प्रस्थान कर दिया। उस समय सोमदत्त मुनि के दर्शन होने से सोमशर्मा ने कहा– महाराज ! आपको अपशकुन हो गया है अतः इन मुनि को मारकर इनके खून को दशों दिशाओं में क्षेपण कर शांतिकर्म करना चाहिए। यह सुनकर राजा ने अपने कान दोनों हाथों से ढ़क लिए। तब विश्वसेन नामक निमित्तज्ञानी ने आकर बतलाया– राजन् ! आपको आज बहुत ही उत्तम शकुन हुआ है। देखिए ! ''यति, घोड़ा, हाथी, बैल, कुम्भ, ये चीजें प्रस्थान और प्रवेश में सिद्धिसूचक मानी गई हैं।''

अन्यत्र भी कहा है–

आरुरोह रथं पार्थ ! गांडीवं चापि धारय !
निर्जितां मेदिनां मन्ये निर्ग्रन्थो यतिरग्रतः ।।

महाभारत में लिखा है कि श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं– हे अर्जुन ! तुम रथ पर चढ़ जाओ और धनुष धारण कर लो। सामने निर्ग्रन्थ मुनिराज के दर्शन हो रहे हैं, इसलिए मैं समझता हूँ कि अब हमने पृथ्वी जीत ली। हमारी विजय निश्चित है। ज्योतिष शास्त्र में भी एक सुभाषित है–

पद्मिन्यो राजहंसाश्च निर्ग्रन्थाश्च तपोधनाः।
यद्देशमभिगच्छन्ति तद्देशे शुभमादिशेत् ।।

पद्मिनी स्त्रियाँ, राजहंस और निर्ग्रन्थ तपस्वी जिस प्रदेश में रहते हैं, उस प्रदेश में सर्वत्र मंगल रहता है। अन्यत्र धर्मग्रन्थों में भी ''साधु के दर्शन से पापों का नाश हो जाता है'' ऐसा कहा गया है।

राजन् ! आप देखिए, प्रातः ही राजा वसुपाल त्रिलोकसुन्दर हाथी लाकर आपको भेंट करेगा। विश्वसेन के वचनों से राजा का मन शान्त हो गया। पुनः प्रातःकाल स्वयं वसुपाल राजा ने आकार वह हाथी सहर्ष भेंट कर दिया।

इधर सोमशर्मा ने पूर्व बैर के कारण रात्रि में सोमदत्त मुनि की हत्या कर दी। जब राजा को इस बात का पता चला तब पाँच प्रकार के दण्डों से दण्डित किया। मुनि हत्या के पाप से सोमशर्मा को कुष्ठ रोग हो गया और वह मरकर सातवें नरक पहुँच गया।

वहाँ से निकलकर महामत्स्य हुआ, छठे नरक गया, सिंह हुआ, पाँचवे नरक गया, सर्प हुआ, चतुर्थ नरक गया, पक्षी हुआ, द्वितीय नरक गया–बगुला हुआ, पुनः प्रथम नरक गया। वहाँ से निकलकर सिंहपुर के राजा सिंहसेन की रानी से पूतिगंध नाम का महादुर्गन्ध शरीरधारी पुत्र हुआ।

किसी समय विमलमदन जिनराज को केवलज्ञान होने पर देवों के आगमन को देखकर पूतिगंध मूर्च्छित हो गया। पुनः होश में आने पर उसे जातिस्मरण हो गया। वह पिता के साथ केवली भगवान का दर्शन करके मनुष्यों की सभा में बैठ

गया। राजा ने पूतिगंध के पूर्व भव पूछे और पूर्वोक्त प्रकार विशेष स्पष्टतया जिनेन्द्र की वाणी से अपने भवांतरों को सुनकर पूतिगंध ने कहा– प्रभो ! अब मुझे दुःखों से छूटने के लिए कोई व्रतादि बतलाइये, तब भगवान ने उसे रोहिणी व्रत का उपदेश दिया। इस व्रत में तीन साल में चालीस उपवास होते हैं और पाँच वर्ष नव दिन में सड़सठ होते हैं। अनंतर विधिवत् उद्यापन करना चाहिए।

पूतिगंध राजकुमार इस व्रत और अणुव्रत आदि के प्रभाव से उसी भव में सुगंध शरीर वाली हो गया। अनंतर एक महीने में ही सल्लेखना विधि से मरण करके प्राणत नामक स्वर्ग में महर्द्धिक देव हो गया। वहाँ से च्युत होकर पूर्वविदेह में पुंडरीकिणी नगरी के विमलकीर्ति राजा की श्रीमती रानी से अर्ककीर्ति नाम का पुत्र हो गया। आगे जाकर अककीर्ति ने महावैभव स्वरूप चक्रवर्ती के पद को प्राप्त किया, अमित सुखों का अनुभव करके विरक्त हो जैनेश्वरी दीक्षा ले ली। अंत में मरणकर सोलहवें स्वर्ग में देवपद को प्राप्त किया। उस समय पूतिगंधा का जीव जो कि रोहिणी व्रत के प्रभाव से स्वर्ग में देवी हुई थी, वह इस देव की प्रिय देवी हुई। वहाँ से च्युत होकर आप अशोक राजा हुए हैं।

इस प्रकार मुनिराज के मुख से भवांतरों को सुनकर राजा–रानी अति प्रसन्न हुए और सभी पुत्र–पुत्रियों के भव पूछकर हर्षितमना अपने शहर वापस आ गये। एक समय श्वेत केश को देखकर विरक्त होकर राजा अशोक ने वासुपूज्य भगवान के समवसरण में जैनेश्वरी दीक्षा ले ली और सात ऋद्धि से सम्पन्न हुए। भगवान के गणधर हो गये। अनन्तर मोक्ष को पधार गये। रोहिणी भी सुमति आर्यिका के समीप आर्यिका दीक्षा लेकर स्त्री पर्याय को छेदकर सोलहवें स्वर्ग में देव हो गई।

इस प्रकार से रोहिणी व्रत का माहात्म्य अचिंत्य है। इस व्रत में हर उपवास के दिन भगवान वासुपूज्य का अभिषेक करके पूजन करना चाहिए, पुनः यह जाप्य करना चाहिए–

जाप्य मंत्र–ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय नमः।

***

श्री रविव्रत पूजा

स्थापना

हे पार्श्वनाथ ! करुणा निधान, तुमने करुणा का दान दिया।
जो दीन दुखी हैं इस जग में, उनको शिव सौख्य प्रदान किया।।
इक श्रेष्ठी रत्न मतीसागर ने, भक्ति का फल पाया है।
रवीवार का व्रत करके शुभ, निज सौभाग्य जगाया है।।
हम भाव सहित प्रभु गुण गाते, अरु पद में करते हैं अर्चन।
निज हृदय कमल में तिष्ठाने, प्रभु करते हैं तव आह्वानन्।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

दोहा- **जल की धारा दे रहे, चरणों में हे नाथ !।**
जन्म-जरादि नाश हो, चरण झुकाते माथ।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन चरणों चर्चने, आए हम हे नाथ !
भव आताप विनाश हो, चरण झुकाते माथ।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय अक्षत के प्रभु, भर लाए हम थाल।
अक्षय पद पाने चरण, पूजा करें त्रिकाल।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

परम सुगन्धित पुष्प यह, लेकर आए साथ।
कामबाण विध्वंश हों, तव चरणों में माथ।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत के शुभ नैवेद्य यह, चढ़ा रहे हम नाथ।
क्षुधा रोग विध्वंश हो, चरण झुकाते माथ।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

घृत का अनुपम दीप यह, हाथों लिए प्रजाल।
मोह अंध का नाश हो, चरण झुकाते भाल।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्ट गंधमय धूप यह, खेते अपरम्पार।
अष्ट कर्म का नाश हो, वन्दन बारम्बार।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

चढ़ा रहे हम भाव से, ताजे फल रसदार।
मोक्ष महाफल प्राप्त हो, भवदधि पावैं पार।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्य चढ़ाते भाव से, लेकर द्रव्य अनेक।
पद अनर्घ्य हो प्राप्त शुभ, यही भावना एक।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रविवार व्रत के दिना, करें पार्श्व गुणगान।
जलधारा देते चरण, पाने सौख्य महान्।। *(शांतये शांतिधारा)*

अर्पित करते चरण में, पुष्पों का यह हार।
गुण गाने से पार्श्व के, मिले मोक्ष उपहार।। *(पुष्पांजलिं क्षिपेत्)*

जयमाला

दोहा- **अर्चा के शुभ भाव से, वन्दन करें त्रिकाल।**
रविव्रत पूजा की यहाँ, गाते हम जयमाल।।

(शंभू छन्द)

उपसर्ग परीषह में तुमने, अतिशय समता को धारा है।
अतएव पार्श्व प्रभु भव्यों ने, तुमको हे नाथ ! पुकारा है।।
ओले शोले पत्थर पानी, दुष्टों ने तुम पर बरसाए।
तव श्रेष्ठ तपस्या के आगे, सारे शत्रू पद सिरनाए।।
तुमने तन चेतन का अन्तर, प्रत्यक्ष रूप से दिखलाया।
नश्वर शरीर का मोह त्याग, निश्चय स्वरूप प्रभु ने पाया।।
यह संयम की शक्ति मानो, उपसर्ग प्रभुजी झेले हैं।
जो ध्यान शक्ति की ढाल लिए, हर बाधाओं से खेले हैं।।
सब राग-द्वेष तुमसे हारे, उन पर तुमने जय पाई है।
हम समता रस का पान करें, मन में यह आन समाई है।।
तुम सर्व शक्ति के धारी प्रभु, जीवों को निज सम करते हो।
जो दीन-दुःखी द्वारे आते, उनके सारे दुख हरते हो।।
इक सेठ मतीसागर जानो, जो मन से अति दुखयारा था।
जो अशुभ कर्म के कारण से, निज सुत वियोग का मारा था।।
पा पुत्र एक शुभ होनहार, जो परदेशों में भटका था।
सुधि भूल गया था निज गृह की, जो माया-मोह में अटका था।।
तब सेठ ने रविव्रत पूजा कर, शुभ पुण्य सुफल को पाया था।
वह पुत्र प्राप्त करके अपना, अतिशय सौभाग्य जगाया था।।
जो शरण प्रभु की पाते हैं, अतिशय शुभ पुण्य कमाते हैं।
व्रत धारण करके पूजा कर, बहु सौख्य सम्पदा पाते हैं।।
जो पूजा करने आते हैं, वह खाली हाथ न जाते हैं।
वह अर्चा करके भाव सहित, सब मनवांछित फल पाते हैं।।
उपसर्ग कमठ ने कीन्हा जब, धरणेन्द्र स्वर्ग से आया था।
फण फैलाया था पद्मावति ने, प्रभु को उस पर बैठाया था।।

फण का शुभ छत्र बनाकर के, क्षण में उपसर्ग नशाया था।
भक्तों ने भक्ती वश होकर, अपना कर्त्तव्य निभाया था।।
था अन्जन चोर अधम पापी, उसने जिनवर को ध्याया था।
ऋद्धी उसने पाई अतिशय, फिर स्वर्ग सुपद को पाया था।।
सीता की अग्नि परीक्षा में, अग्नि को कमल बनाया था।
सूली का सेठ सुदर्शन ने, अतिशय सिंहासन पाया था।।
जब नाग-नागिनी दुखी हुए, तब प्रभु ने संकट हारा था।
द्रोपदी के चीरहरण को भी, जिनवर ने शीघ्र सम्हारा था।।
होकर अधीर प्रभु चरणों में, यह पूजा करने आए हैं।
अपने भावों के उपवन से, यह भाव सुमन शुभ लाए हैं।।
जिस पद को तुमने पाया है, वह अनुपम श्रेष्ठ निराला है।
जो भवि जीवों के लिए शीघ्र, शुभ पदवी देने वाला है।।

दोहा- **रविव्रत को जिन पार्श्व की, पूजा करें विशेष।**
सौख्य सम्पदा प्राप्त कर, पावें जिन स्वदेश।।
रविव्रत के दिन पार्श्व को, पूजें जो भी लोग।
सुख शांति आनन्द पा, पावें शिव का योग।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शिखरणी छंद (महावीर स्वामी....)

रविव्रत के दिन को, करें जो पूजा भाव से।
श्री पारस जिन को, सदा ही ध्यावें चाव से।।
बने ज्ञानी ध्यानी, जगे सौख्य तिनके।
बने पारस वह भी, जजैं पद पार्श्व जिनके।।

।। इत्याशीर्वादः ।।

(नोट- रविव्रत उद्यापन के अवसर पर श्री विघ्नहर पारसनाथ विधान अवश्य कीजिए।)

रविव्रत विधि एवं कथा

आदित्यव्रते पार्श्वनाथार्क संज्ञके आषाढमासे शुक्लपक्षे तत्प्रथमादित्यमारभ्य नवसु अर्कदिनेषु व्रतं कार्यं नववर्षं यावत्। प्रथमवर्षे नवोपवासः, द्वितीयवर्षे नवैकाशनाः, तृतीयवर्षे नवकाञ्जिकाः, चतुर्थवर्षे नवरूक्षाः, पञ्चमवर्षे नवनीरसाः, षष्ठवर्षे नवालवणाः, सप्तमवर्षे नवागोरसाः, अष्टमवर्षे नवोनोदराः, नवमवर्षे अलवणा ऊनोदराः नव। एवमेकाशीतिः कार्याः। व्रतदिने श्रीपार्श्वनाथस्याभिषेकं कार्ये पूजनं च। समाप्तावुद्यापनं च कार्यम्, ये भव्या इदं रविव्रतं विधिपूर्वकं कुर्वन्ति तेषां कण्ठे मुक्तिकामिनी कण्ठरत्नमाला पतिष्यति।

अर्थ–रविव्रत में आषाढ़ मास शुक्ल पक्ष में प्रथम रविवार पार्श्वनाथ संज्ञक होता है, इससे आरंभ कर नौ रविवार तक व्रत करना चाहिए। यह व्रत नौ वर्ष तक किया जाता है। प्रथम वर्ष में नौ रविवारों को उपवास, द्वितीय वर्ष में नौ रविवारों को एकाशन, तृतीय वर्ष में नव रविवारों को काञ्जी–छाछ या छाछ से बने महेरी आदि पदार्थ लेकर एकाशन, चतुर्थ वर्ष में नव रविवारों को बिना घी का रूक्ष भोजन, पंचम वर्ष में नौ रविवारों को नीरस भोजन, षष्ठ वर्ष में नौ रविवारों को बिना नमक का अलोना भोजन, सप्तम वर्ष में नौ रविवारों को बिना दूध, दही और घृत का भोजन, अष्टम वर्ष में नौ रविवारों को ऊनोदर एवं नवम वर्ष में नौ रविवारों को ऊनोदर एवं नवम वर्ष में नौ रविवारों को बिना नमक के नौ ऊनोदर किये जाते हैं। इस प्रकार 81 व्रत दिन होते हैं। व्रत के दिन श्रीपार्श्वनाथ भगवान का अभिषेक और पूजन किया जाता है। जो विधिपूर्वक रविव्रत का पालन करते हैं, उनके गले में मोक्षलक्ष्मी के गले का हार पड़ता है। व्रत पूरा होने पर उद्यापन करना चाहिए।

रविव्रत की यह शास्त्रीय विधि है किन्तु वर्तमान में पूरे 9 वर्ष तक इसमें मात्र अलोना भोजन का एकाशन या उपवास करने की परम्परा भी दिगम्बर जैन समाज में पाई जाती है।

रविव्रत का फल

सुतं वन्ध्या समाप्नोति दरिद्रो लभते धनम्।
मूढ़ः श्रुतवाप्नोति रोगी मुञ्चति व्याधितः।।

अर्थ– रविवार का व्रत करने से वन्ध्या स्त्री पुत्र प्राप्त करती है, दरिद्री व्यक्ति धन प्राप्त करता है, मूर्ख व्यक्ति शास्त्रज्ञान एवं रोगी व्यक्ति व्याधि से छुटकारा प्राप्त कर लेता है।

कथा– काशी देश का बनारस नगरी का राजा महीपाल अत्यंत प्रजावत्सल और न्यायी था। उसी नगर में मतिसागर नाम का एक सेठ और गुणसुन्दरी नाम की उसकी स्त्री थी। इस सेठ के पूर्व पुण्योदय से उत्तमोत्तम गुणवान तथा रूपवान सात पुत्र उत्पन्न हुए।

उनमें छः का तो विवाह हो गया था, केवल लघु पुत्र गुणधर कुँवारे थे, सो गुणधर किसी दिन वन में क्रीड़ा करते विचर रहे थे तो उनको गुणसागर मुनि के दर्शन हो गये। वहाँ मुनिराज का आगमन सुनकर और भी बहुत लोग वन्दनार्थ वन में आये थे, वह सब स्तुति वंदना करके यथास्थान बैठे। श्री मुनिराज उनको धर्मवृद्धि कहकर अहिंसादि धर्म का उपदेश करने लगे।

जब उपदेश हो चुका तब साहूकार की स्त्री गुणसुन्दरी बोली–स्वामी ! मुझे कोई व्रत दीजिए। तब मुनिराज ने उसे पाँच अणुव्रत, तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रत का उपदेश दिया और सम्यक्त्व का स्वरूप समझाया और पीछे कहा– बेटी ! तू आदित्यवार (रविवार) का व्रत कर, सुन इस व्रत की विधि इस प्रकार है कि आषाढ़ मास में शुक्ल पक्ष में अंतिम रविवार (अन्य ग्रंथानुसार अंतिम रविवार है) से लेकर नव रविवारों तक यह व्रत करना चाहिए।

प्रत्येक रविवार के दिन उपवास करना या बिना नमक (मीठा) के अलोना भोजन एक बार (एकासना) करना, पार्श्वनाथ भगवान की पूजा अभिषेक करना। घर के सब आरंभ का त्यागकर विषय और कषाय भावों को दूर करना, ब्रह्मचर्य से रहना, रात्रि जागरण–भजनादि करना और **''ॐ ह्रीं अर्हं श्री पार्श्वनाथाय नमः''** इस मंत्र की 108 बार जाप करना।

नवधाभक्ति कर मुनिराज को भोजन कराना और नववर्ष पूर्ण होने पर उद्यापन करना। सो नव–नव उपकरण मंदिरों में चढ़ाना, नव शास्त्र लिखवाना, नव श्रावकों को भोजन कराना, नव–नव फल श्रावकों को बाँटना, समवशरण का पाठ पढ़ना, पूजन विधान करना आदि।

इस प्रकार गुणसुंदरी व्रत लेकर घर आई और सब कथा घर के लोगों को कह सुनाई तो घरवालों ने सुनकर इस व्रत की बहुत निंदा की। इसीलिए उसी दिन से उस घर में दरिद्रता का वास हो गया। सब लोग भूखों मरने लगे, तब सेठ के सातों पुत्र सलाह करके परदेश को निकले। सो साकेत (अयोध्या) नगरी में जिनदत्त सेठ के घर जाकर नौकरी करने लगे और सेठ–सेठानी बनारस ही में रहे।

कुछ काल के पश्चात् बनारस में कोई अवधिज्ञानी मुनि पधारे, सो दरिद्रता से पीड़ित सेठ–सेठानी भी वंदना को गये और दीन भाव से पूछने लगे– हे नाथ ! क्या कारण है कि हम लोग ऐसे रंक हो गये ? तब मुनिराज ने कहा– तुमने मुनिप्रदत्त रविवारव्रत की निंदा की है इससे यह दशा हुई है।

यदि तुम पुनः श्रद्धा सहित इस व्रत को करो तो तुम्हारी खोई हुई सम्पत्ति तुम्हें फिर मिलेगी। सेठ–सेठानी ने मुनि को नमस्कार करके पुनः रविवार व्रत किया और श्रद्धा सहित पालन किया जिससे उनको फिर से धन–धान्यादि की अच्छी प्राप्ति होने लगी।

परन्तु इनके सातों पुत्र साकेतपुरी में कठिन मजदूरी करके पेट पालते थे तब एक दिन लघु भ्राता गुणधर वन में घास काटने को गया था, सो शीघ्रता से गट्ठा बाँधकर घर चला आया और हंसिया (दरांत) वहीं भूल आया। घर आकर उसने भावज से भोजन माँगा। तब वह बोली–

लालाजी ! तुम हंसिया भूल आये हो, सो जल्दी जाकर ले आओ पीछे भोजन करना, अन्यथा हंसिया कोई ले जायेगा तो सब काम अटक जायेगा। बिना द्रव्य नया दांतड़ा कैसे आयेगा ? यह सुनकर गुणधर तुरंत ही पुनः वन में गया तो देखा कि हंसिया पर बड़ा भारी साँप लिपट रहा है।

यह देखकर वह बहुत दुःखी हुआ कि दांतड़ा बिना लिये तो भोजन नहीं मिलेगा और दांतड़ा मिलना कठिन हो गया है तब वह विनीत भाव से सर्वज्ञ

वीतराग प्रभु की स्तुति करने लगा सो उसके एकाग्रचित्त होकर स्तुति करने के कारण धरणेन्द्र का आसन हिला, उसने समझा कि अमुक स्थानों में पार्श्वनाथ जिनेन्द्र के भक्त को कष्ट हो रहा है।

तब करुणा करके पद्मावती देवी को आज्ञा दी कि तुम जाकर प्रभुभक्त गुणधर का दुःख निवारण करो। यह सुनकर पद्मावती देवी तुरन्त वहाँ पहुँची और गुणधर से बोली–

हे पुत्र ! तुम भय मत करो। यह सोने का दांतड़ा और रत्न का हार तथा रत्नमई पार्श्वनाथ प्रभु का बिंब भी ले जाओ, सो भक्तिभाव से पूजा करना, इससे तुम्हारा दुःख शोक दूर होगा।

गुणधर, देवी द्वारा प्रदत्त द्रव्य और जिनबिम्ब लेकर घर आया तो प्रथम तो उनके भाई ये देखकर डरे कि कहीं यह चुराकर तो नहीं लाया है, क्योंकि ऐसे कौन सा पाप है जो भूखा नहीं करता है, परन्तु पीछे गुणधर के मुख से सब वृत्तांत सुनकर बहुत प्रसन्न हुए और भूरि–भूरि प्रशंसा करने लगे।

इस प्रकार दिनों–दिन उनका कष्ट दूर होने लगा और थोड़े ही दिनों में वे बहुत धनी हो गये। पश्चात् उन्होंने एक बड़ा मंदिर बनवाया, प्रतिष्ठा कराई, चतुर्विध संघ को चारों प्रकार का यथायोग्य दान दिया और बड़ी प्रभावना की।

जब यह सब वार्ता राजा ने सुनी, तब उन्होंने गुणधर को बुलाकर सब वृत्तांत पूछा और अत्यन्त प्रसन्न हो अपनी परम सुन्दरी कन्या गुणधर को ब्याह दी तथा बहुत सा दान दहेज दिया। इस प्रकार बहुत वर्षों तक वे सातों भाई राज्य मान्य होकर सानंद वहीं रहे, पश्चात् माता–पिता का स्मरण करके अपने घर आये और माता–पिता से मिले। पश्चात् बहुत काल तक मनुष्योचित सुख भोगकर सन्यासपूर्वक मरणकर यथायोग्य स्वर्गादि गति को प्राप्त हुए और गुणधर उससे तीसरे भव में मोक्ष गये।

इस प्रकार व्रत के प्रभाव से मतिसागर सेठ का दरिद्र दूर हुआ और उत्तमोत्तम सुख भोगकर उत्तम–उत्तम गतियों को प्राप्त हुआ। जो और भव्यजीव श्रद्धासहित नौ वर्ष विधिपूर्वक इस व्रत का पालन करेंगे, वे उत्तम गति पावेंगे।

❋❋❋

जिनगुण सम्पत्ति पूजा

(स्थापना)

सोलह कारण भावना, पूर्व भवों में भाते हैं।
तीर्थंकर प्रकृति के बन्धक, पञ्च कल्याणक पाते हैं।।
चौंतिस अतिशय पाने वाले, प्रातिहार्य प्रगटाते हैं।
अनन्त चतुष्टय प्रकट करें जो, केवलज्ञान जगाते हैं।।
प्राप्त हमें हो जिनगुण सम्पत्ति, शिव पद में होवे विश्राम।
विशद हृदय में आह्वानन कर, करते बारम्बार प्रणाम।।

ॐ ह्रीं श्री जिनगुण सम्पत्ति समूह ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री जिनगुण सम्पत्ति समूह ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री जिनगुण सम्पत्ति समूह ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(वीर छंद)

गंगा यमुना का निर्मल जल, तन का मल ही धो पाता है।
जो लगा कर्म मल चेतन में, वह रत्नत्रय से जाता है।।
हम जिनगुण की पूजा करके, अब निज गुण पाने आए हैं।
अब जिनगुण सम्पत्ति पाने को, यह नीर चढ़ाने लाए हैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिषष्टि जिनगुण सम्पद्भ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरभित चन्दन की शीतलता, नर देह ताप को शांत करे।
क्रोधादि कषायों का आतप, जिनधर्म गंध उपशांत करे।।
हम जिनगुण की पूजा करके, अब निज गुण पाने आए हैं।
अब निजगुण सम्पत्ति पाने चंदन, हम यहाँ चढ़ाने लाए हैं।।2।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिषष्टि जिनगुण सम्पद्भ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

आतम स्वरूप अक्षय अखण्ड, जो संयम से मिल पाता है।
संयम के उपवन में सौरभ, जिसका अतिशय खिल जाता है।।
हम जिनगुण की पूजा करके, अब निज गुण पाने आए हैं।
अब जिनगुण की सम्पत्ति पाने, यह अक्षय अक्षत लाए हैं।।3।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिषष्टि जिनगुण सम्पद्भ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्पों को पाकर मन मेरा, अतिशय पुलकित हो जाता है।
भँवरे सम भ्रमण किया करता, न आत्म ज्ञान जग पाता है।।
हम जिनगुण की पूजा करके, अब निज गुण पाने आए हैं।
अब जिनगुण सम्पत्ति पाने को, यह पुष्प चढ़ाने लाए हैं।।4।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिषष्टि जिनगुण सम्पद्भ्यो कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रेष्ठ सरसव्यंजन खाकर भी, ना तृप्त कभी हो पाते हैं।
वह जिह्वा स्वाद के बाद सभी, क्षणभर में ही नश जाते हैं।।
हम जिनगुण की पूजा करके, अब निज गुण पाने आए हैं।
अब जिनगुण सम्पत्ति पाने को, नैवेद्य चढ़ाने लाए हैं।।5।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिषष्टि जिनगुण सम्पद्भ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है मोह तिमिर का अँधियारा, सदियों से हमें घुमाया है।
भव-भव में दुःख सहे हमने, नहिं सुपथ हमें दिख पाया है।।
हम जिनगुण की पूजा करके, अब निज गुण पाने आए हैं।
अब जिनगुण सम्पत्ति पाने को, हम दीप जलाकर लाए हैं।।6।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिषष्टि जिनगुण सम्पद्भ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

हमने कर्मों को जड़ माना, अरु बन्ध सदा करते आये।
अज्ञानी बनकर ठगे स्वयं, न कर्म बन्ध से बच पाए।।
हम जिनगुण की पूजा करके, अब निज गुण पाने आए हैं।
अब जिनगुण सम्पत्ति पाने को, यह धूप जलाने लाए हैं।।7।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिषष्टि जिनगुण सम्पद्भ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल दाता जग में कोई नहीं, हर जीव स्वयं फल पाता है।
किन्तु यह फल की आशा में, चारों गति में भटकाता है।।
हम जिनगुण की पूजा करके, अब निज गुण पाने आए हैं।
अब जिनगुण सम्पत्ति पाने को, यह श्रेष्ठ श्रीफल लाए हैं।।8।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिषष्टि जिनगुण सम्पद्भ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जिस गति में जन्म मिला हमको, उस गति में ही रम जाते हैं।
शुभ पद अनर्घ्य को पाने का, पुरुषार्थ नहीं कर पाते हैं।।
हम जिनगुण की पूजा करके, अब निज गुण पाने आए हैं।
अब जिनगुण सम्पत्ति पाने को, यह अर्घ्य बनाकर लाए हैं।।9।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिषष्टि जिनगुण सम्पद्भ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा– श्री जिनेन्द्र के गुण तथा, जिनवर पूज्य त्रिकाल।
जिनगुण सम्पत्ति की यहाँ, गाते हैं जयमाल।।

शम्भू छंद

सुर नर विद्याधर नरेन्द्र भी, पद में शीश झुकाते हैं।
तीर्थंकर के पाद मूल में, जिनगुण पाने आते हैं।।
जिन गुण सम्पद मोक्षमार्ग में, अतिशय कारण जाना है।
तीर्थंकर प्रकृति का कारण, सोलह कारण माना है।।1।।
दर्श विशुद्धी आदिक सोलह, भव्य भावना भाते हैं।
प्रबल पुण्य से भव्य जीव ही, तीर्थंकर पद पाते हैं।।
गर्भ जन्म तप ज्ञान मोक्ष यह, उत्सव पंच कहाते हैं।
तीर्थंकर प्रकृति के बन्धक, कल्याणक यह पाते हैं।।2।।
धर्म तीर्थ के नेता बनकर, मोक्षमार्ग दर्शाते हैं।
पञ्च परावर्तन तजकर के, शिव पदवी को पाते हैं।।
छत्र चँवर भामण्डल अनुपम, दिव्य ध्वनि सुनाते हैं।
पुष्प वृष्टि सुर सिंहासन तरु, दुन्दुभि देव बजाते हैं।।3।।
तीर्थंकर पद की महिमा यह, प्रातिहार्य प्रगटाते हैं।
समवशरण लक्ष्मी के भर्त्ता, त्रिभुवनपति कहलाते हैं।।
जन्म समय की महिमा अनुपम, दश अतिशय जिन पाते हैं।
केवलज्ञान के दश अतिशय जिन, ज्ञान जगे प्रगटाते हैं।।4।।

चौदह अतिशय देव शरण में, आकर श्रेष्ठ दिखाते हैं।
श्री जिनेन्द्र चौंतिस अतिशय यह, महिमाशाली पाते हैं।।
इस प्रकार त्रेसठ गुण के शुभ, त्रेसठ जो व्रत करते हैं।
ऋद्धि–सिद्धि सौभाग्यप्रदायक, कोष पुण्य से भरते हैं।।5।।
प्रतिपदा के सोलह व्रत हैं, पाँच पञ्चमी के जानो।
आठ अष्टमी के व्रत भाई, बीस दशें के तुम मानो।।
चौदस के व्रत चौदह होते, जोड़ सभी त्रेसठ गाए।
भाव सहित जो व्रत करते हैं, वह जिनगुण सम्पद पाए।।6।।
श्रावक और श्राविका कोई, विधि सहित व्रत करते हैं।
सुख शांती पा जाते हैं वह, अपने सब दुख हरते हैं।।
रोग मरी दुर्भिक्ष कलह से, उनकी रक्षा होती है।
भूत पिशाच आदि कोई भी, सर्व आपदा खोती है।।7।।
ओज तेज बल वृद्धी वैभव, स्वर्गों के सुख पाते हैं।
कामदेव चक्री बनकर के, तीर्थंकर बन जाते हैं।।
समवशरण सा वैभव पाकर, मोक्ष लक्ष्मी पाते हैं।
सिद्ध शिला पर जाने वाले, शिव सुख में रम जाते हैं।।8।।
यही भावना भाते हैं प्रभु, कर्म सभी क्षय हो जावें।
बोधि समाधि लाभ प्राप्त हो, सुगति गमन हम भी पावें।।
होवे मरण समाधि मेरा, जिनगुण सम्पदा पा जावें।
'विशद' ज्ञान को पाकर हम भी, परम श्रेष्ठ शिव सुख पावें।।9।।

(घत्ता छंद)

जय जय जिन स्वामी, शिवपथ गामी, जिनगुण सम्पत के स्वामी।
तव चरण नमामि त्रिभुवननामी, बनो प्रभो ! मम पथ गामी।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिषष्टि जिनगुण सम्पद्भ्यो अनर्घपदप्राप्तये जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– सुर गणपति न कर सकें, गुण गणना तव नाथ।
वह गुण पाने हेतु तव, चरण झुकाते माथ।।

इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

जिनगुण सम्पत्ति व्रत कथा

बन्दूं आदि जिनेन्द्र पद मन वच शीश नवाय।
जिन गुण सम्पत्ति व्रत कथा कहूँ भव्य सुखदाय।।

धातकी खण्ड द्वीप के पूर्व मेरू सम्बन्धी पश्चिम विदेह क्षेत्र में गांधील नामक देश और पाटलिपुत्र नाम का नगर अपनी शोभा से युक्त है। उस नगर में नागदत्त नाम का एक सेठ और सुमति नाम की सेठानी ये दोनों दम्पत्ति रहते थे, इनके पास द्रव्य न था, धनहीन होने के कारण अत्यन्त पीड़ित थे, ये दोनों दम्पत्ति जंगल में से काठ आदि लाकर उसे बेचकर अपना पेट पालन करते थे। एक दिन बेचारी सेठानी जंगल में भूख–प्यास से घबरा कर एक वृक्ष की छाया में बैठी थी, इतने में बहुत से नर–नारियों के झुंड को बड़े उत्साह के साथ जाते देखकर आश्चर्य युक्त होती हुई उनसे पूछा–

अहो बन्धुओं ! माता–बहिनों ! आज आप बड़े उत्साह के साथ हाथों में अनेक प्रकार की सुन्दर सामग्री लेकर कहाँ जा रहे हो ? यह कौनसा उत्सव है ? यह सुनकर जनसमूह ने उत्तर दिया कि इस अम्बरतिलक नाम के पर्वत पर पिहिताश्रव नाम के बड़े ज्ञानी मुनिराज आये हैं। उनके दर्शन–पूजन करने के लिए हम सब लोग बड़े उत्साह से जा रहे हैं। यह शुभ समाचार सुनकर सुमति सेठानी फूली न समाई और बड़ी भक्ति से सब लोगों के साथ वन्दना करने के लिए चल दी।

क्रमशः सब लोग मुनिराज के पास पहुँच गये, सब ही बड़ी भक्ति से अष्ट द्रव्यों से पूजन दर्शन करते हुए अपने जीवन को सफल बनाते हुए मन–वचन–काय को एकाग्र करके मुनिराज का धर्मोपदेश सुनने के लिये बैठ गये।

मुनिराज ने अपने उपदेश में देवपूजा, गुरु सेवा, स्वाध्याय, संयम, तप, दान देना, इन षट् कर्मों का तथा अहिंसा, सत्य, अचौर्य, स्वदार–सन्तोष और परिग्रह परिमाण ये पाँच अणुव्रत, चार शिक्षाव्रत, तीन गुणव्रत इस तरह बारह व्रतों का उपदेश देते हुए सम्यग्दर्शन का स्वरूप बतलाया, इस प्रकार उपदेश सुनकर सब लोग अपने–अपने स्थान को चले गये।

दरिद्रता से अत्यन्त दुःखी सुमति सेठानी समय पाकर मुनिराज से अपने दुःखों की कहानी कहने लगी–हे भगवान् ! हे दीनबन्धु ! हे दयासागर ! हे

पतितपावन ! हे भवतारक ! मैं गरीब अबला दरिद्रता से अत्यन्त दुःखी होकर दुःखों को भोग रही हूँ।

मैं इस दुःख से बहुत ही व्याकुल हो गई हूँ, स्वामिन् ! किस कारण से मेरे से सम्पत्ति दूर जा रही है और अब किस तरह वह सम्पत्ति मिल सकती है, जिससे मेरा यह दुःख मिट कर मैं सुख का अनुभव करूँ, क्योंकि दरिद्रता मिटे बिना धर्म साधन करने के लिए यह मनुष्य असमर्थ रहता है, किसी कवि ने कहा भी है–

''भूखे भक्ति न होय, धर्माधर्म न सूझे कोय''

भगवन् यही हालत मेरी हो रही है। जिस समय सब लोग धर्मोपदेश सुन रहे थे उस समय दरिद्रा सेठानी अपनी दारिद्ररूपी तत्त्व के विचार में निमग्न हो रही थी इसलिए उसने अवसर पाकर अपना विचार फौरन ही कह सुनाया।

जिनके राजा–रंक, महल–श्मशान, काच–कन्चन, शत्रु–मित्र समान हैं। ऐसे उन करूणार्णव स्वामी ने बड़े शीतल एवं शांतता से उस सुमति सेठानी को निम्न प्रकार से समझाया–

हे सुमति ! तुम सुनो–पलारकूट नामक गाँव में दिबिलह नाम का राजा सुमति नाम की रानी तथा रूप यौवन नाम सम्पन्न धनश्री नाम की इनक एक लड़की थी, एक दिन वह धनश्री अपनी 5–7 सखियों के साथ वन–क्रीड़ा करने को शहर के बाहर उद्यान में (बाग में) गई, वहाँ पर परम तपस्वी उद्भट विद्वान समाधिगुप्त नाम के मुनिराज एक वृक्ष के नीचे ध्यानमग्न बैठे हुए थे, तब वह मदोन्मत अपने रूप यौवन से गर्विष्ठ धनश्री मुनिराज को देखकर निन्दात्मक अनेक प्रकार के भण्ड वचन बोली और मुनिराज के ऊपर बहुत से शिकारी कुत्ते छोड़े जिससे मुनिराज के ऊपर भारी उपसर्ग हुआ किन्ती धीर वीर परम तपस्वी वे मुनिराज अपने ध्यान से विचलित नहीं हुए।

इस मुनि निन्दा के कारण धनश्री आयु पूर्णकर मरकर सिंहनी हुई और सिंहनी पर्याय को पूर्ण करके मरकर तू धनहीन दरिद्री सुमती सेठानी हुई, जो कोई मूर्ख इस तरह मुनि निन्दा व उन पर उपसर्ग करता है वह इसी तरह नीच गति को प्राप्त होकर अनेक प्रकार के कष्टों को कहता है।

सुमति सेठानी अपने पूर्वभव सुनकर बहुत दुःखी होकर रोने लगी फिर

हिम्मत कर दोनों हाथ जोड़कर गुरुदेव से पूछने लगी, गुरु महाराज ! इस महापाप से कैसे छुटकारा पाऊँगी।

सुमति तुम घबराओं नहीं, तुम सम्यग्दर्शन पूर्वक जिनगुण सम्पत्ति व्रत करो जिससे तुम्हारे मनवांछित कार्य की सिद्धि निश्चित होगी।

इस व्रत की विधि इस प्रकार से है कि प्रथम जिन सोलह कारण भावनाओं को भाने से (अनुभव करने से) मनुष्यों के तीर्थंकर प्रकृति का बन्ध होता है ऐसे उनके 16 उपवास, पंच परमेष्ठी के 5, अष्ट प्रातिहार्य के 8, चौंतिस अतिशयों के 34 इस तरह कुल 63 उपवास या प्रोषध (एक भक्ति) करे, उपवास के दिन तमाम गृहारम्भ परिग्रह छोड़कर भगवान् का पंचामृताभिषेक करके बड़े समारोह के साथ पूजन करें और दिन में तीन वक्त समायिक, स्वाध्यायादि करें, जब तक व्रत पूर्ण नहीं होवे तब तक इसी तरह करती रहें।

उपवास अथवा एकाशन के दिन जिनगुण सम्पत्ति मंत्रों में से जिन मंत्र का दिन हो, उस दिन उस मंत्र का जाप करें।

व्रत पूर्ण होने पर सविधि उद्यापन करें, उद्यापन की शक्ति नहं हो तो व्रत को दूना करें। व्रतोद्यापन इस प्रकार करें, मन्दिर में कोई एक मण्डप माण्ड कर बड़े समारोह के साथ भगवान् की स्नपनपूर्वक पूजा करें, पात्रदान देवें यथा नाम शक्ति गरीबों को दान देवें। आम, केले, नारंगी, श्रीफल, बिजोरे, अखरोट, खारिक, बादाम इत्यादि त्रेसठ 63 फल और अनेक प्रकार की नैवेद्य सहित भगवान की पूजन करें जिनालय में चंदोवा, चंवर, छत्र, झालर, घंटा आदि उपकरण भेंट करें, ज्ञानावरणी कर्मक्षयार्थ श्रावक–श्राविकाओं को 63 ग्रंथ बाँटे।

सुमति सेठानी ने मुनिराज के मुखकमल से व्रतों की विधि सुनकर व्रत को ग्रहण किया और यथाशक्ति व्रत का पालन करके उद्यापन किया, आयु के अन्त में सन्यास मरण करके स्वर्ग में ललितांग देव की पट्टरानी देवी हुई, पुण्य प्रभाव से व्रत के माहात्म्य से वह स्वयंप्रभा देवी अनेक प्रकार के सुखों का अनुभव करने लगी, देवी पर्याय पूर्ण करके स्वर्ग से चलकर जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह चक्रवर्ती की लक्ष्मीवती नाम की रानी के उदर से श्रीमती नाम की पुत्री हुई, इस लड़की का विवाह वज्रजंघ राजा के साथ हुआ।

एक दिन ये दोनों दम्पत्ति वनक्रीड़ा करने के लिये गये, वहाँ पर सर्प सरोवर

के तटपर मुनिराज के दर्शन किये और उन्हीं चारण ऋषीश्वरों को बड़ी भक्ति से आहार दिया। उस आहारदान के प्रभाव से दोनों दम्पत्ति भोगभूमि में उत्पन्न हुये, वहाँ से देव हुये। देव आयु पूर्ण करके जम्बूद्वीप में मनुष्य पर्याय को धारण करके उत्कृष्ट आर्यिका के व्रत धारण किये और उत्कृष्ट व्रतोपवासादि करके बड़ी तपस्या की। अन्त में सन्यास धारण कर स्त्री लिंग छेदकर दूसरे स्वर्ग में देव हुई, वहाँ की आयु समाप्त कर जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह सम्बन्धी वत्सलावती देश में सुसीमा नाम की नगरी में सुबुधि नामक राजा की मनोरमा रानी उदर से केशव नाम का पुत्र हुआ, केशव ने अपने पिता के दिये हुए राज्य को न्यायनीति पूर्वक चलाया और अनेक प्रकार के भोगों को भोगा, कोई कारण पाकर वैराग्य हो गया और श्रीमंदर स्वामी के चरण निकट में दिगम्बरी दीक्षा धारण करके घोर तप किया। तप के प्रभाव से सोलहवें स्वर्ग में देव हुआ, वहाँ 22 सागर पर्यन्त सुखानुभव करके वहाँ से चलकर जम्बूद्वीप के विदेह क्षेत्र में पुष्कलावती रानी के उदर से धनदेव नामक पुत्र हुआ वह चक्रवर्ती का भण्डारी हुआ।

एक दिन धनदेव चक्रवर्ती के साथ मुनिराज का धर्मोपदेश सुनकर वह धनदेव वैराग्य को प्राप्त हो गया और कर्मनाशिनी जिनदीक्षा को धारण करके घोर तपस्या करके आयु के अन्त में मरण कर सर्वार्थसिद्धि में अहमिन्द्र हो गया। वहाँ से चलकर भरत क्षेत्र के कुरूजांगल देश में हस्तिनापुर नगरी में श्रेयान्स का राजा हुआ। इन्होंने बहुत दिनों तक राज्य वैभव के नोहर भोग भौगे और श्री 1008 श्री प्रथम तीर्थंकर ऋषनाथ भगवान को भक्ति पूर्वक आहार दान दिया, उस दान के प्रभाव से दानवीर कहलाये। कारण दान की प्रथा श्रेयांस राजा द्वारा ही चालू हुई, इसके बाद वह राजा श्रेयान्स ऋषभनाथ भगवान के मुख से धर्मोपदेश सुनकर वैराग्य प्राप्त कर जिनदीक्षा लेकर उग्र तप करते हुए आत्मा में निमग्न हो गए और उस शुक्ल ध्यान के प्रभाव से केवलज्ञान उत्पन्न करके मोक्षपद को प्राप्त हुए।

इस प्रकार सुमति नाम की दरिद्रा सेठानी ने जिनगुण सम्पत्ति व्रत सम्यग्दर्शन पूर्वक चालन करके अनुक्रम से मोक्ष पद प्राप्त किया। इसी प्रकार जो भव्य जीव जिनगुण सम्पत्ति नाम के व्रतों को विधिपूर्वक करेंगे वे भी निश्चित रूप से सुमति सेठानी के समान अविनाशी पद को प्राप्त होंगे।

जिनगुण सम्पत्ति व्रत करो, मनमें कर जिन ध्यान।
नर सुर के सुख भोग कर, पावो पद निर्वाण।।

अथ जिनगुण सम्पत्ति मन्त्रः

प्रतिपदा (एकम) के 16 जाप्य

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा दर्शनविशुद्धि भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।1 ।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा विनयसंपन्नता भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।2 ।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा शीलव्रतेष्वनतिचार भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।3 ।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा अभीक्ष्णज्ञानोपयोग भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।4 ।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा संवेग भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।5 ।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा शक्तितस्त्याग भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।6 ।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा शक्तितस्तपो भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।7 ।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा साधुसमाधि भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।8 ।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा वैयावृत्यकरण भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।9 ।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा अर्हद्भक्ति भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।10 ।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा आचार्यभक्ति भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।11 ।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा बहुश्रुतभक्ति भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।12 ।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा प्रवचनभक्ति भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।13 ।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा आवश्यकापरिहारिणि भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।14 ।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा मार्गप्रभावनाय भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।15 ।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा प्रवचनवत्सलत्व भावनायै जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।16 ।।

पंचमी के 5 जाप्य

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा स्वर्गावतरणगर्भकल्याण जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।1 ।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा जन्माभिषेककल्याण जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।2 ।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा परिनिष्क्रमणकल्याण जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।3 ।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा केवलज्ञानकल्याण जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।4 ।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा निर्वाणकल्याण जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।5 ।।

अष्टमी के आठ जाप्य

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा अशोकवृक्षमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।1 ।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा सुरपुष्पवृष्टिमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।2 ।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा दिव्यध्वनिमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।3 ।।

ॐ ओम् हां हीं हूं हौं हः असिआउसा चतुषष्टिचामरमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।4 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सिंहासनमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।5 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा भामंडलमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।6 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा देवदुंदुभिमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।7 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा छत्रत्रयमहाप्रातिहार्य जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।8 ।।

दशमी के कुल 20 जाप्य

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा निस्वेदत्वसहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।1 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा निर्मलत्वसहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।2 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा क्षीरगौररूधिरत्व सहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।3 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा समचतुरस्त्रसंस्थान सहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।4 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा वज्रवृषभनाराचसंहनन सहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।5 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सौरूप्य सहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।6 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सौगन्ध्यसहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।7 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सौलक्षण्यसहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।8 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अप्रमितवीर्य सहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।9 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा प्रियहितवादित्व सहजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।10 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा गव्यूतिशतचतुष्टयसुभिक्षत्व घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।1 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा गगनगमनत्व घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।2 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अप्राणिवधत्व घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।3 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा भुक्तयभाव घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।4 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा उपसर्गाभाव घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।5 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा चतुर्मुखत्व घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।6 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्वविद्येश्वर घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।7 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अच्छायत्व घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।8 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा अपक्ष्मस्पंदत्व घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।9 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा समाननखकेशत्व घातिक्षयजातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।10 ।।

चतुर्दशी के 14 जाप्य

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्वार्धमागधीयभाषा देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।1 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्वजनमैत्रीभाव देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।2 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्वर्तुफलादिशोभिततरूपरिणाम देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।3 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा आदर्शतलप्रतिमारत्नमयीमही देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।4 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा विहरणमनुगतवायुत्व देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।5 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा सर्वजनपरमानन्दत्व देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।6 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा वायुकुमारोपशमितधूलिकंटका देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।7 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा कृतगन्धोदकवृष्टि देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।8 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा पादन्यासेकृतपद्मानि देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।9 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा फलभारनम्रशालि देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।10 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा शरत्कालवन्निर्मलगगनत्व देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।11 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा शरन्मेघवन्निर्मलदिग्भावत्व देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।12 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा चतुर्निकायापरमरापराह्वान देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।13 ।।

ॐ ओम् ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः असिआउसा धर्मचक्रचतुष्टय देवोपनीतातिशय जिनगुणसम्पदे मुक्तिपदकारणस्वरूपायै नमः ।।14 ।।

***

कर्मदहन पूजन

स्थापना

ॐ ह्रीं श्री सिद्ध सनातन, सिद्ध शिला के अधिकारी।
अष्टकर्म हैं दुःखकर जग में, नाश किए तुम अविकारी।।
इन कर्मों ने हमें सताया, भ्रमण कराया है संसार।
पञ्च परावर्तन कीन्हा है, मिला नहीं तव पद आधार।।
शरणागत बनकर हम आए, राह दिखाओ हमको नाथ।
तव गुण पाने है आह्वानन, प्रभु निभाओ मेरा साथ।।

ॐ ह्रीं अष्टकर्म निवारणार्थ श्री सिद्ध परमेष्ठी जिनेन्द्र ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम सन्निहितौ भव-भव वषट् सन्निधिकरण्।

(चौपाई)

विषयों के कीचड़ में फँसकर, जीवन कई व्यर्थ गँवाए हैं।
अब मल मिथ्या धोने को हम यह, अमृत जल भर लाए हैं।।
हम अष्ट कर्म का दहन करें, बस यही भावना भाते हैं।
जिन सिद्ध प्रभु के चरणों में, हम सादर शीश झुकाते हैं।।1 ।।

ॐ ह्रीं ज्ञानावरण कर्मविनाशनाय श्री सिद्ध परमेष्ठिने नमः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जग की चिन्ताओं में फँसकर, जीवन को चिता बनाया है।
जिस-जिस को अपना माना है, वह कोई काम न आया है।।
हम अष्ट कर्म का दहन करें, बस यही भावना भाते हैं।
जिन सिद्ध प्रभु के चरणों में, हम सादर शीश झुकाते हैं।।2 ।।

ॐ ह्रीं दर्शनावरण कर्मविनाशनाय श्री सिद्ध परमेष्ठिने नमः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

पल-पल आयू घटती रहती, आयु का अंत भी आ जाए।
अक्षत यह यहाँ चढ़ाते हैं, शायद अक्षय पद मिल जाए।।
हम अष्ट कर्म का दहन करें, बस यही भावना भाते हैं।
जिन सिद्ध प्रभु के चरणों में, हम सादर शीश झुकाते हैं।।3 ।।

ॐ ह्रीं वेदनीय कर्मविनाशनाय श्री सिद्ध परमेष्ठिने नमः अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

इस काम भाव की उलझन से, निर्मलता न रह पाती है।
हम पुष्प चढ़ाते आज यहाँ, अब निज की याद सताती है।।
हम अष्ट कर्म का दहन करें, बस यही भावना भाते हैं।
जिन सिद्ध प्रभु के चरणों में, हम सादर शीश झुकाते हैं।।4।।

ॐ ह्रीं मोहनीय कर्मविनाशनाय श्री सिद्ध परमेष्ठिने नमः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

भोजन की तृष्णा मिटी नहीं, जग के मिष्ठान सभी खाये।
नैवेद्य चढ़ाते हैं अनुपम, लोलुपता मेरी मिट जाए।।
हम अष्ट कर्म का दहन करें, बस यही भावना भाते हैं।
जिन सिद्ध प्रभु के चरणों में, हम सादर शीश झुकाते हैं।।5।।

ॐ ह्रीं आयुकर्म कर्मविनाशनाय श्री सिद्ध परमेष्ठिने नमः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अब ज्ञान दीप भी क्षीण हुआ, अज्ञान अंधेरा छाया है।
शुभ ज्ञान दीप की ज्योति जले, यह घृत का दीप जलाया है।।
हम अष्ट कर्म का दहन करें, बस यही भावना भाते हैं।
जिन सिद्ध प्रभु के चरणों में, हम सादर शीश झुकाते हैं।।6।।

ॐ ह्रीं नामकर्म कर्मविनाशनाय श्री सिद्ध परमेष्ठिने नमः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

खोटे कर्मों ने दुःख दिया, अब उनसे बचने आये हैं।
कर्मों की शक्ती नश जाए, यह धूप जलाने लाए हैं।।
हम अष्ट कर्म का दहन करें, बस यही भावना भाते हैं।
जिन सिद्ध प्रभु के चरणों में, हम सादर शीश झुकाते हैं।।7।।

ॐ ह्रीं गोत्रकर्म कर्मविनाशनाय श्री सिद्ध परमेष्ठिने नमः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

हम राग-द्वेष में पड़े रहे, फल पुण्य पाप के पाए हैं।
सुख-दुख ने घेरा डाला है, उनसे बचने फल लाए हैं।।
हम अष्ट कर्म का दहन करें, बस यही भावना भाते हैं।
जिन सिद्ध प्रभु के चरणों में, हम सादर शीश झुकाते हैं।।8।।

ॐ ह्रीं अन्तराय कर्मविनाशनाय श्री सिद्ध परमेष्ठिने नमः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

भूले भटके जग के प्राणी, न ज्ञान रोशनी पाए हैं।
आलोक जगे अब चेतन का, यह अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।।

हम अष्ट कर्म का दहन करें, बस यही भावना भाते हैं।
जिन सिद्ध प्रभु के चरणों में, हम सादर शीश झुकाते हैं।।9।।

ॐ ह्रीं अष्टकर्मविनाशनाय श्री सिद्ध परमेष्ठिने नमःअनर्घपद प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- शांतिधारा कर रहे, प्रासुक लेकर नीर।
कर्मनाश होवें मेरे, मिट जावे भव पीर।। शान्तये शांतिधारा....
पुष्पाञ्जलि करते यहाँ, भाव सुमन ले हाथ।
भक्त शरण में आ पड़े, झुका रहे पद माथ।। पुष्पाञ्जलि क्षिपेत्..

जयमाला

दोहा- कर्म दहन के भाव से, करते प्रभु गुणगान।
गाते हैं जयमालिका, चरण शरण में आन।।

(शम्भू छन्द)

काल अनादि से जीवों का, कर्मों से संयोग रहा।
भटक रहे हैं जग के प्राणी, अज्ञानी बन सभी अहा।।
ज्ञानावरणी कर्म ज्ञान पर, पर्दा डाले घूम रहा।
ज्ञानहीन होकर सदियों से, भव-भव में बहु दुःख सहा।।
कर्म दर्शनावरणी जग में, दर्शन गुण का घात करे।
दर्शन गुण की शक्ति प्राणी, जिसके कारण पूर्ण हरे।।
वेदनीय के भेद कहे दो, साता और असाता है।
सुख-दुख का वेदन यह प्राणी, जिनके कारण पाता है।।
मोहनीय से मोहित होकर, सारा जग भरमाता है।
मिथ्या सम्यक् उभय रूप, त्रय दर्शन मोह कहाता है।।
चारित मोह कषाय रूप है, पच्चिस भेद गिनाए हैं।
पर पदार्थ में जग जीवों को, फिरता जो अटकाए है।।
आयु कर्म गति में रोके, स्वर्ग-नरक ले जाता है।
मानव पशु बनाकर जग में, बारम्बार घुमाता है।।
नाम कर्म तन की रचना कर, रूप अनेक बनाता है।
कहे तिरानवे जिसके भाई, भेद शुभाशुभ पाता है।।

उच्च-नीच दो भेद गोत्र के, जैनागम में गाए हैं।
दान लाभ भोगोपभोग शुभ, वीर्यान्तराय कहाए हैं।।
अष्ट कर्म के कारण प्राणी, बहुतक दुःख उठाते हैं।
जन्म-मरण करते हैं भव-भव, बारम्बार भ्रमाते हैं।।
दो हैं गंध वर्ण रस बन्धन, पञ्च शरीर और संघात।
छह संस्थान संहनन सुर द्विक्, अगुरुलघु उच्छ्वासोपघात।।
अयश कीर्ति परघात अनादेय, सुस्वर शुभ स्थिर युग जान।
गमन गति द्वय स्पर्शाष्टक, अपर्याप्त वेदनीय मान।।
आंगोपांग तीन दुर्भगयुत, प्रत्येक नीच कुल अरु निर्माण।
सभी बहत्तर उपान्त्य समय में, अयोग केवली के सब जान।।
आनुपूर्वी आदेय इन्द्रियाँ, पंच यशः कीर्ति पर्याप्त।
सुभग उच्चकुल त्रसबादर शुभ, नाश अन्त में बनते आप्त।।
ध्यानाग्नि से कर्म दहनकर, बन जाते केवलज्ञानी।
अनन्त चतुष्टय पाने वाले, दिव्य देशना के दानी।।
सर्व कर्म का नाश किए फिर, शिव पदवी को पाते हैं।
छोड़ असार संसार वास वह, सिद्ध शिला पर जाते हैं।।
यही भावना लेकर आये, हम भी शिव पदवी पावें।
अष्ट कर्म का नाश करें न, भवसागर में भटकावें।।
व्रत संयम का पालन करना, यही हमारा ध्येय रहे।
विशद हृदय की मरुभूमि से, ज्ञानामृत की धार बहे।।

दोहा- कर्म दहन करके विशद, पाएँ मुक्ति वास।
शिवपद हम भी पाएँगे, है पूरा विश्वास।।

ॐ ह्रीं अष्टकर्म विनाशनाय श्री सिद्ध परमेष्ठिने नमः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- कर्म दहन व्रत कर मिले, शिवपद का उपहार।
अक्षय अविनाशी परम, मुक्ति रमा का प्यार।।

।। इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्।।

कर्मदहन-विधान के उपवास और जाप की विधि

कर्म के मूल भेद 8 हैं। उत्तरभेद 148 हैं। इनका दहन (नाश) करना हर भव्य आत्मा का कर्त्तव्य है। उस दहन की विधि तपस्या करना है, अनशन आदि तप करने से आत्मा में कषायों का नाश हो शांति और सुख का अनुभव होता है तथा आत्मा धीरे-धीरे कर्मबंधन से मुक्त हो सिद्ध हो जाता है, इसीलिये कर्म की 148 प्रकृति को नष्ट करने के लिये 148 तथा अनन्त गुणों के साथ सिद्धों के मुख्य आठ गुण प्राप्त करने के लिये 8 इस प्रकार कुल 156 उपवास करना चाहिये।

ये उपवास जिस गुण-स्थान में जितनी कर्म-प्रकृतियों का नाश होता है, उसी गुण-स्थान की संख्या वाली तिथियों में कर्म-प्रकृतियों की संख्या के हिसाब से करना चाहिये। जैसे चौथे गुण-स्थान में सात प्रकृतियों का नाश होता है तो चौथे नग 7 में (हर चौथ को एक) कुल सात उपवास करना चाहिये। अर्थात्- क्रम से चौथ के 7, सप्तमी के 3, नवमी के 36, दशमी का 1, बारस के 16, चौदश के 85 इस तरह 148 तथा अष्टमी के 8 कुल मिलाकर 156 तिथियों में उपवास करना चाहिये।

इस तरह तीन साल साढ़े छह मास में यह व्रत पूर्ण होता है। हर एक उपवास के दिन भिन्न-भिन्न मन्त्रों की जाप (1 माला या 108 बार) देना चाहिये। जैसा कि आगे कहा गया है।

व्रत पूर्ण हो जाने के बाद उत्साहपूर्वक शक्ति के अनुसार उद्यापन करना चाहिये। श्री जिन मन्दिर जी में उपकरण और पात्रों को चार प्रकार का दान देना चाहिये। मण्डल माड़कर पूजा करना और आगे के लिये धर्माराधना की प्रतिज्ञा करना चाहिये।

मांडना बनाकर ही विधान करना चाहिये।

चौथ के 7 उपवास के 7 मन्त्र :-

ॐ ह्रीं मिथ्यात्व-कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं सम्यक्मिथ्यात्व-कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं सम्यक्प्रकृति-कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धी क्रोध-कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धी

मान–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धी माया–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं अनन्तानुबन्धी लोभ–कर्मरहित सिद्धाय नमः।

सप्तमी के 3 उपवास के 3 मन्त्र :–

ॐ ह्रीं नरकायुष्कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं तिर्यग्गायुष्कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं मनुष्यायुष्कर्मरहित सिद्धाय नमः।

नवमी के 36 उपवास के 36 मन्त्र :–

ॐ ह्रीं निद्रानिद्रा–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं प्रचलाप्रचला–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं स्त्यानगृद्धि–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं नरकगतिनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं तिर्यग्गतिनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं नरकगत्यानुपूर्वीनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं तिर्यगत्यानुपूर्वीनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं एकेन्द्रियनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं द्वीन्द्रियनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं त्रीन्द्रियनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं चतुरिन्द्रियनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं स्थावरनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं आतपनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं उद्योतनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं परघातनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं सूक्ष्मनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरणक्रोध–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरणमान–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरणमाया–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं प्रत्याख्यानावरणलोभकर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणक्रोध–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणमान–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणमाया–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं अप्रत्याख्यानावरणलोभ–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं स्त्रीवेद–मोहनीय–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं पुरुषवेद–मोहनीय–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं नपुंसकवेद–मोहनीय–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं हास्य–मोहनीय–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं रति–मोहनीय–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं अरति–मोहनीय–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं शोक–मोहनीय–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं भय–मोहनीय–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं जुगुप्सा–

मोहनीय–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं संज्वलन क्रोध–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं संज्वलन मान–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं संज्वलन माया–कर्मरहित सिद्धाय नमः।

दशमी के उपवास का 1 मन्त्र :–

ॐ ह्रीं संज्वलन लोभ–कर्मरहित सिद्धाय नमः।

बारस के 16 उपवास के 16 मन्त्र :–

ॐ ह्रीं निद्रा–दर्शनावरण–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं प्रचला–दर्शनावरण–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं मतिज्ञानावरण–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं श्रुतज्ञानावरण–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं अवधिज्ञानावरण–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं मनःपर्ययज्ञानावरण–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं केवलज्ञानावरण–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं चक्षुदर्शनावरण–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं अचक्षुदर्शनावरण–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं केवलदर्शनावरण–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं दानान्तराय–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं लाभान्तराय–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं उपभोगान्तराय–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं वीर्यान्तराय–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं औदारिकशरीरनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः।

चौदश के 85 उपवासों के 85 मन्त्र :–

ॐ ह्रीं वैक्रियकशरीरनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं आहारकशरीरनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं तैजसशरीरनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं कार्माणशरीरनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं औदारिकबन्धननाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं वैक्रियकबन्धननाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं आहारकबन्धननाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं तैजसबन्धननाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं कार्माणबन्धननाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं औदारिकसंघातनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं वैक्रियकसंघातनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं आहारकसंघातनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं तैजससंघातनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं कार्माणसंघातनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं औदारिकांगोपांगनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं

वैक्रियकांगोपांगनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं आहारकांगोपांगनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं समचतुरस्रसंस्थाननाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं न्यग्रोधपरिमंडलसंस्थान–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं स्वातिसंस्थाननाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं वामनसंस्थाननाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं कुब्जकसंस्थाननाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं हुण्डकसंस्थाननाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं **वज्रवृषभनाराचसंहनन–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं बज्रनाराचसंहनन–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं नाराचसंहनननाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः।** ॐ ह्रीं अर्धनाराचसंहननाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं **कीलकसंहननाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं असंप्राप्तासृपाटिका–संहननाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं श्यामवर्णनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं हरितवर्णनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं पीतवर्णनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं अरुणवर्णनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं श्वेतवर्णनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं तिक्तरसनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं कटुकरसनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं मधुरसनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं आम्लरसनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं कषायरसनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं मृदुस्पर्शनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं कठोरस्पर्शनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं शीतस्पर्शनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं उष्णस्पर्शनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं रूक्षस्पर्शनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं स्निग्धस्पर्शनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं गुरूस्पर्शनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं लघुस्पर्शनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं सुगन्धनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं दुर्गन्धनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः।** ॐ ह्रीं देवगत्यानुपूर्वीनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं **मनुष्यगत्यानुपूर्वीनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं प्रत्येकशरीरनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं साधारणशरीरनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः।** ॐ ह्रीं **पर्याप्तिनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं अपर्याप्तिनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं दुर्भगनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं सुभगनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं आदेयनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं**

अनादेयनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं अगुरुलघुनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं उपाघातनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं उच्छ्वासनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं शुभविहायोगतिनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं अशुभविहायोगतिनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं स्थिरनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं अस्थिरनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं शुभनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं अशुभनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं सुस्वरनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं दुःस्वरनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं अयशकीर्ति–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं यशकीर्ति–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं निर्माणनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं देवगतिनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं मनुष्यगतिनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं पञ्चेन्द्रियजातिनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं त्रसनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं बादरनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं सूक्ष्मनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं तीर्थंकरनाम–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं असातावेदनीय–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं सातावेदनीय–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं देवायुष्क–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं नीचगोत्र–कर्मरहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं उच्चगोत्र–कर्मरहित सिद्धाय नमः।

इस प्रकार 148 कर्मप्रकृतियों का क्षयकर आत्मा मोक्ष चली जाती है फिर वह संसार में कभी नहीं आती। मुक्त आत्मा को सिद्ध कहते हैं। सिद्ध अवस्था में उसके अनन्तगुण प्रगट होते हैं। उनमें आठ गुण मुख्य हैं। इन आठ गुणों के लिये अष्टमी के आठ उपवास करना चाहिये। प्रत्येक दिन क्रम से नीचे लिखे आठ मन्त्रों का जाप देना चाहिये।

अष्टमी के 8 उपवास के 8 मन्त्र :–

ॐ ह्रीं अनन्तसम्यक्त्व–गुणसहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं अनन्तदर्शन–गुणसहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं अनन्तज्ञान–गुणसहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं अनन्तवीर्य–गुणसहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं सूक्ष्मत्व–गुणसहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं अवगाहनत्व–गुणसहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं अगुरुलघुत्व–गुणसहित सिद्धाय नमः। ॐ ह्रीं अव्याबाधत्व–गुणसहित सिद्धाय नमः।

***

भक्तामर पूजा

स्थापना

भक्तामर स्तोत्र का, करते हम गुणगान।
आह्वानन् करते हृदय, पाने पद निर्वाण।।

ॐ ह्रीं श्री भक्तामर स्तोत्र आराध्य आदिनाथ जिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं। अत्र मम् सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरण्।

(मोतियादाम छंद)

भराया झारी में शुचि नीर, मिटाने को लाए भव तीर।
जिनेश्वर आदिनाथ महाराज, पूजते पाने शिव साम्राज।।1।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्व.स्वाहा।

घिसाया चंदन यह गोसीर, मिले अब मुझको भव का पीर।
जिनेश्वर आदिनाथ महाराज, पूजते पाने शिव साम्राज।।2।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शशी सम तन्दुल लाए जीर, मिले अक्षय पद की तासीर।
जिनेश्वर आदिनाथ महाराज, पूजते पाने शिव साम्राज।।3।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

सुगन्धित पुष्पित लाए फूल, काम का रोग होय निर्मूल।
जिनेश्वर आदिनाथ महाराज, पूजते पाने शिव साम्राज।।4।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

बनाये ताजे यह पकवान, मुझे हो समता का रसपान।
जिनेश्वर आदिनाथ महाराज, पूजते पाने शिव साम्राज।।5।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

किया दीपक से यहाँ प्रकाश, मोहतम का हो पूर्ण विनाश।
जिनेश्वर आदिनाथ महाराज, पूजते पाने शिव साम्राज।।6।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय मोहांधकार विनाशनाय दीपं निर्व. स्वाहा।

जलाते धूप अग्नि में आज, नशे कर्मों का सकल समाज।
जिनेश्वर आदिनाथ महाराज, पूजते पाने शिव साम्राज।।7।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

चढ़ाते ताजे फल भगवान्, मोक्ष फल हमको मिले महान।
जिनेश्वर आदिनाथ महाराज, पूजते पाने शिव साम्राज।।8।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

बनाकर अर्घ्य भराया थाल, चढ़ाते भक्ती से नत माल।
जिनेश्वर आदिनाथ महाराज, पूजते पाने शिव साम्राज।।9।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय अनर्घ्य पद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **शांतिधारा दे रहे, हो शांती भगवान।**
पूजा का फल पाएँ हम, हो आतम कल्याण।। शान्तये शांतिधारा...

दोहा- **पुष्पाञ्जलि करते यहाँ, सुरभित लेकर फूल।**
सुख शांती सौभाग्य हो, कर्म होंय निर्मूल।। *पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्*

जयमाला

दोहा- **भक्तामर स्तोत्र की, महिमा अगम अपार।**
जयमाला गाते यहाँ, पाने शिव का द्वार।।

(चौपाई)

भक्तामर स्तोत्र निराला, सुख शांती शुभ देने वाला।
पार नहीं महिमा का भाई, तीन लोक में है सुखदायी।।
मानतुंग मुनिवर जी गाए, आदिनाथ को मन से ध्याए।
संकट दूर हुआ तव भाई, यह स्तोत्र की महिमा गाई।।
भाव सहित जो भी जन ध्याते, उनके सब संकट कट जाते।
पूजा कोई करे शुभकारी, कोई पाठ पढ़े मनहारी।।
जो भी श्रद्धा भाव से ध्याए, मन में उत्तम शांती पाए।
भक्त की भक्ति जाए ना खाली, जो सौभाग्य बढ़ाने वाली।।

अक्षर एक-एक मंत्र बताया, कोई जान सके न माया।
वृहस्पती भी यदि गुण गाए, तो भी पूरा न कह पाए।।
महिमा सुनकर हम भी आए, श्रद्धा सुमन साथ में लाए।
हम हैं प्रभु अज्ञानी प्राणी, प्रभु आप हो केवलज्ञानी।।
तुमने रत्नत्रय को पाया, पावन मोक्ष मार्ग अपनाया।
कर्म नाशकर ज्ञान जगाया, अनन्त चतुष्टय शुभ प्रगटाया।।
दिव्य देशना आप सुनाए, भव्यों को शिव मार्ग दिखाए।
बने आप जग के उपकारी, तीन लोक में मंगलकारी।।
तुम हो सर्व चराचर ज्ञाता, भवि जीवों के भाग्य विधाता।
पड़ी भँवर में मेरी नैया, उसके स्वामी आप खिवैया।।
'विशद' भाव से तुमको ध्याते, पद में सादर शीश झुकाते।
जग के सारे कष्ट मिटाओ, शिवपद हम को शीघ्र दिलाओ।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथ जिनेन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **दास खड़े हैं चरण में, सुन लो नाथ पुकार।**
जैसा प्रभु निज का किया, करो मेरा उद्धार।।

(इत्याशीर्वादः पुष्पांजलि क्षिपेत्)

भक्तामर व्रत विधि

विधि- जैन समाज में भक्तामर स्तोत्र सबसे अधिक प्रसिद्धि को प्राप्त है। इसकी महिमा के विषय में सभी लोग जानते हैं कि श्री मानतुंगमहामुनि ने इस स्तोत्र की रचना की है, एक-एक काव्य के भक्तिमय प्रभाव से एक-एक करके अड़तालीस ताले टूट गये हैं और अतिशय चमत्कार हुआ है। यह श्री आदिनाथ भगवान का स्तोत्र है, प्रारम्भ में 'भक्तामरप्रणत' आदि श्लोक में 'भक्तामर' पद के आने से इसका 'भक्तामर स्तोत्र' नाम प्रसिद्ध हो गया है।

इसके 48 व्रत होते हैं। एक-एक काव्य को आधार बनाकर 48 व्रत किये जाते हैं। व्रत के दिन भक्तामर पूजा या ऋषभदेव की प्रतिमा का पंचामृताभिषेक कर

श्री ऋषभदेव की पूजा करना चाहिए। पुनः एक-एक व्रत के दिनों में क्रम से एक-एक मंत्र का जाप्य करना चाहिए। मंत्र निम्न प्रकार हैं-

कोई-कोई भक्तामर स्तोत्र में छपे ऋद्धि मंत्र का जाप्य करते हैं। वैसे भक्तामर के एक-एक काव्य का भी 108 बार जाप्य कर सकते हैं। व्रत विधि पूर्णकर उद्यापन में श्री ऋषभदेव प्रतिमा विराजमान कराना, भक्तामर स्तोत्र छपाकर वितरित करना चाहिए। यथाशक्ति दान आदि करके भक्तामर विधान करके व्रत पूर्ण करना चाहिए।

समुच्चय मंत्र-(1) ॐ ह्रीं अर्हं श्रीवृषभनाथतीर्थंकराय नमः। अथवा

2. ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं अर्हं श्रीवृषभनाथ तीर्थंकराय नमः।

प्रत्येक व्रत के पृथक्-पृथक् मंत्र-

ॐ ह्रीं प्रणतदेवसमूह मुकुटाग्रमणिद्योतकाय महापापान्धकार विनाशनाय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः।।1।।

ॐ ह्रीं गणधर-चारणसमस्त-ऋषीन्द्र-चन्द्रादित्य-सुरेन्द्र-नरेन्द्र-व्यंतरेन्द्र-नागेन्द्र-चतुर्विध मुनीन्द्रस्तुत चरणारविंदाय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः।।2।।

ॐ ह्रीं विगतबुद्धि गर्वापहार सहित श्रीमन्मानतुंगाचार्य भक्तिसहिताय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः।।3।।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनगुणसमुद्र चन्द्रकान्तिमणितेजशरीर समस्त-सुरनाथस्तुत श्रीआदिपरमेश्वराय नमः।।4।।

ॐ ह्रीं समस्तगणधरादि-मुनिवरप्रतिपालक मृगबालवत् श्रीआदिपरमेश्वराय नमः।।5।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रचन्द्रभक्ति सर्वसौख्य तुच्छभक्ति बहुसुखदायकाय जिनेन्द्राय जिनादिपरमेश्वराय नमः।।6।।

ॐ ह्रीं अनंतभव-पातक सर्व विनाशकाय तवस्तुति सौख्यदायकाय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः।।7।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रस्तवन सत्पुरुष चिच्चमत्काराय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः।।8।।

ॐ ह्रीं श्रीजिनपूजन-स्तवन-कथाश्रवणेन जगत्त्रयभव्यजीव समस्तपापौघ-विनाशनाय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः।।9।।

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यानुपमगुणमंडित समस्तोपमासहिताय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः।।10।।

ॐ ह्रीं जिनेन्द्रदर्शन अनंतभवसंचित अघसमूहविनाशनाय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः।।11।।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनशान्तिस्वरूपगुण त्रिभुवनतिलकाय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः ।।12।।

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यविजयी रूपातिशय अनंतचन्द्रतेजोजितृ सदातेज-पुंजायमान श्रीआदिपरमेश्वराय नमः ।।13।।

ॐ ह्रीं शुभ्रगुणातिशयरूप त्रिभुवन जिनजिनेन्द्रगुण विराजमानाय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः ।।14।।

ॐ ह्रीं मेरुवद्अचल शीलशिरोमणये चतुर्विधवनिताविकाररहित शीलसमुद्राय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः ।।15।।

ॐ ह्रीं धूमस्नेहवर्त्यादिविघ्नरहित त्रैलोक्य परमकेवलदीपकाय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः ।।16।।

ॐ ह्रीं राहुचन्द्रपूजित निरावरणज्योतिरूप लोकालोकित सदोदयाय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः ।।17।।

ॐ ह्रीं नित्योदयरूप अगम्य राहु त्रिभुवनसर्वकलासहित विराजमानाय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः ।।18।।

ॐ ह्रीं चन्द्रसूर्योदयास्त रजनी-दिवारहित परमकेवलोदय सदा दीप्तिविराजमानाय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः ।।19।।

ॐ ह्रीं हरिहरादिज्ञानरहित परमज्योतिकेवलज्ञानसहिताय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः ।।20।।

ॐ ही त्रिभुवनमनोमोहन जिनेन्द्ररूपान्यदृष्टान्तरहित परम मंडिताय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः ।।21।।

ॐ ह्रीं श्री जिनवरमाताजनित जिनेन्द्रपूर्वदिग्भास्कर केवलज्ञान भास्कराय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः ।।22।।

ॐ ह्रीं त्रैलोक्यपावनादित्यवर्ण परमअष्टोत्तरशतलक्षण नवशत व्यंजनाय समुदाय एकसहस्र अष्टमंडिताय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः ।।23।।

ॐ ह्रीं ब्रह्मा-विष्णु-श्रीकंठ-गणपति-त्रिभुवनदेवत्वसहिताय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः ।।24।।

ॐ ह्रीं बुद्धशंकरशेषधरब्रह्मानाम् सहिताय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः ।।25।।

ॐ ह्रीं अधोलोक-मध्यलोक-ऊर्ध्वलोकत्रय कृताहोरात्रिनमस्कार समस्तार्त-रौद्रविनाशक त्रिभुवनेश्वराय भवदधितरणतारणसमर्थाय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः ।।26।।

ॐ ह्रीं श्री परमगुणाश्रितावगुणानाश्रित श्रीआदिपरमेश्वराय नमः ।।27।।

ॐ ह्रीं अशोकवृक्ष प्रातिहार्यसहिताय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः ।।28।।

ॐ ह्रीं सिंहासन प्रातिहार्यसहिताय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः ।।29।।

ॐ ह्रीं चतुःषष्टिचामर प्रातिहार्यसहिताय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः ।।30।।

ॐ ह्रीं छत्रत्रय प्रातिहार्यसहिताय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः ।।31।।

ॐ ह्रीं अष्टादशकोटिवादित्र प्रातिहार्यसहिताय श्रीपरमादिपरमेश्वराय नमः ।।32।।

ॐ ह्रीं समस्त पुष्पजातिवृष्टि प्रातिहार्यसहिताय श्रीपरमादिपरमेश्वराय नमः ।।33।।

ॐ ह्रीं श्री कोटिभास्करप्रभामण्डित भामण्डलप्रातिहार्यसहिताय श्रीपरमादिपरमेश्वराय नमः ।।34।।

ॐ ह्रीं जलधरपटल गर्जित ध्वनियोजनप्रमाणप्रातिहार्यसहिताय श्रीपरमादिपरमेश्वराय नमः ।।35।।

ॐ ह्रीं हेमकमलोपरिकृतगमन देवकृतातिशयसहिताय श्रीपरमादिपरमेश्वराय नमः ।।36।।

ॐ ह्रीं धर्मोपदेशसमये समवसरणविभूतिमंडिताय श्रीपरमादिपरमेश्वराय नमः ।।37।।

ॐ ह्रीं मस्तक गलितमद सुरगजेन्द्र महादुद्धर भयविनाशकाय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः ।।38।।

ॐ ह्रीं आदिदेव प्रसादान्महासिंहभयविनाशकाय श्री युगादिदेवपरमेश्वराय नमः ।।39।।

ॐ ह्रीं श्रीविश्वक्षणसमर्थ महावन्हिविनाशकाय जिननामजलाय श्रीआदिब्रह्मणे नमः ।।40।।

ॐ ह्रीं रक्तनयन सर्प जिननामनागदमन्यौषधये समस्तभय-विनाशकाय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः ।।41।।

ॐ ह्रीं महासंग्रामभयविनाशकाय सर्वांगरक्षणकराय श्रीप्रथमजिनेन्द्राय नमः ।।42।।

ॐ ह्रीं महारिपुयुद्धे जय-विजयप्राप्तकाय श्रीआदिवृषभेश्वराय नमः ।।43।।

ॐ ह्रीं महासमुद्रचलितवात महादुर्जयभयविनाशकाय श्री आदिपरमेश्वराय नमः ।।44।।

ॐ ह्रीं दशताप जलंधराष्टदश-कुष्टसन्निपातमहारोगविनाशकाय परमकामदेवरूपलक्ष्मीदायकादि जिनेश्वराय नमः ।।45।।

ॐ ह्रीं महाबंधन आपादकंठपर्यन्त बैरीकृतोपद्रवभयविघाताय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः ।।46।।

ॐ ह्रीं सिंह-गजेन्द्रराक्षसभूतपिशाचशाकिनीरिपु परमोपद्रवविनाशकाय श्रीआदिपरमेश्वराय नमः ।।47।।

ॐ ह्रीं पठन-पाठन श्रोतव्य श्रद्धावनत् मानतुंगाचार्यादि समस्तजीव कल्याणदाय श्री आदिपरमेश्वराय नमः ।।48।।

***

भक्तामर महिमा

भक्तामर स्तोत्र की महिमा वचनातीत है। इसका प्रत्येक छन्द स्वयं में पूर्ण मंत्र शक्ति से युक्त है। आदिप्रभु की भक्ति में लीन होकर मुनिराज मानतुंग स्वामी ने तो इसका सम्यक् फल प्राप्त किया ही परन्तु अन्य भी जिसने इसका ध्यान अर्थात् सम्मुख संकट उपस्थित होने पर एक-एक छन्द का भी स्मरण किया, उसके सर्व संकट विलय हो गए।

निरपराधी सेठ हेमदत्त को चोर के कहने पर राजा ने कुए में फिकवा दिया किन्तु उसने धैर्य नहीं खोया और प्रथम-द्वितीय काव्य मंत्र की भक्तिपूर्वक आराधना की, जिसके प्रभाव से विजयादेवी ने प्रकट हो उसे कुएं से निकाल दिया और सिंहासन पर आसीन कर वस्त्राभूषणों से अलंकृत किया। यह देख राजा ने सेठ से क्षमायाचना की।

सेठ सुदत्त ने तृतीय-चतुर्थ काव्य का ऋद्धि मन्त्र समेत स्मरण किया तो प्रभावती देवी प्रगट हुई तथा समुद्र के तूफान एवं मांसाहारी तापसी से उसके प्राणों की रक्षा की।

देवल नामक काष्ठकार ने पाँचवें काव्य की ऋद्धि मंत्र सहित आराधना की तो उसे अजिता देवी सिद्ध हुई। देवी से वरदान पाकर वह राजाओं से भी अधिक सौभाग्य को प्राप्त हुआ।

महाराजा हेमवान के पुत्र कुमार भूपाल ने छठवें काव्य का यथाविधि जाप किया तो ब्राह्मी देवी प्रगट हुई और वह धुरन्धर विद्वान् हुए।

महासम्राट भूपाल के कुमार रतिशेखर को मारने के लिए एक पाखण्डी,

चारित्रहीन तापसी ने वैताली विद्या भेजी। परन्तु सातवें काव्य की आराधना से जम्भादेवी ने प्रगट होकर रक्षा की तथा तापसी ने स्वकृत दुष्कर्म की क्षमा माँगी और श्रावक के व्रत अंगीकार किये।

मुनिराज से ऋद्धि सिद्धि मंत्र सहित आठवें काव्य को सीखकर धनपाल वैश्य आराधना में लीन हो गया। महादेवी ने साक्षात् दर्शन देकर उसकी दरिद्रता का निवारण कर दिया तथा जिनपूजन का उपदेश दिया। ये दृश्य देखकर राजा ने भी प्रजा सहित जिनधर्म अंगीकार किया।

महाराजा हेमब्रह्म ने नवमें काव्य का भक्तिपूर्वक स्मरण किया तो उन्हें पुत्ररत्न की प्राप्ति हुई।

श्रीदत्त नामक वैश्य पर करुणा कर मुनिराज ने भक्तामर का दूसरा काव्य सिखा दिया। उसने भक्तिपूर्वक जब भी स्मरण किया सारे विघ्न उसी क्षण पलायमान हो गये। मिथ्या योगी द्वारा रसकूप के लालच में महाकूप में गिरा दिये जाने पर भी मन्त्र के प्रभाव से देवी ने उपस्थित होकर उसे बाहर निकाल दिया और बहुत सा द्रव्य समर्पित किया।

राजपुत्र तुरंग कुमार द्वारा ग्यारहवें काव्य का निश्चयपूर्वक आराधन करने पर उसके उपवन की बाबड़ी का खारा जल भी मीठा हो गया।

महाराजा कुमारपाल के मन्त्री पुत्र ने बारहवें काव्य का यथाविधि आराधन किया तो मोहिनी नामक देवी ने आकर उसे कामधेनु गाय प्रदान की; जिसके प्रभाव से दुखियों के दुख का निवारण एवं जैनधर्म की अतिशय भावना की।

सुमतिचन्द्र मन्त्री द्वारा जिनधर्म को श्रेष्ठ बताया जाने पर रानी ने रौद्र रूप वाली सहस्र व्यन्तरों सहित पिशाचिनी देवी उसे मारने के लिए भेजी परन्तु तेरहवें काव्य के स्मरण से रोहिणी देवी ने प्रगट हो उन सभी को भगा दिया।

परनारी में आसक्त नरेश ने स्वविवाहिता महारानी कल्याणी को कुएं में फिकवा दिया। धर्मनिष्ठा रानी ने 14-15वें काव्य का जाप किया। जिसके प्रभाव से जम्भा देवी ने उसे निकाल कर सिंहासन पर बिठाया और वस्त्राभूषणों से अलंकृत किया। राजा ने यह चमत्कार देख सदैव के लिए दुश्चरित्र का त्याग कर दिया।

नवविवाहिता पत्नी की प्रतिज्ञा से अवगत होकर क्षेमंकरजी ध्यानस्थ

होकर सोलहवें काव्य का पाठ करने लगे। जिनशासन की अधिष्ठात्री चतुर्भुजी देवी उपस्थित हुई, उसने रत्नद्वीप से रत्नप्रतिमा लाकर देवालय में विराजमान कर जिनधर्म का प्रकाश फैलाया। जिसका अवलोकन कर उसका पति अपने गुरु सहित सच्चा जिनभक्त बन सत्संगति जीवन व्यतीत करने लगा।

महाशीलवती कल्याणश्री का विवाह दुराचारी रत्नशेखर के साथ हो गया। सत्रहवें काव्य की भक्त्याराधना से गान्धारी महादेवी ने प्रगट होकर जिनमहिमा का प्रकाश फैलाया। जिसका अवलोकन कर उसका पति अपने गुरु सहित सच्चा जिनभक्त बन गया।

मंत्री पुत्र भद्रकुमार बिल्कुल निरक्षर थे। पिता की मृत्यु के उपरान्त राजा द्वारा समझाये जाने पर उसने अठारहवें काव्य मन्त्र का भावपूर्वक जाप किया जिससे वज्रादेवी ने प्रत्यक्ष हो उसे वरदान दिया। फलतः वह महा विद्वान् बन गये।

विवेकहीन होकर राजा सूरपाल ने सुखानन्द कुमार को बन्दीगृह में डलवा दिया। उन्होंने उन्नीसवें काव्य का त्रियोगपूर्वक स्मरण किया तो जम्बूदेवी ने उसे बन्धन मुक्त कर दिया एवं राजा को भी सत्यता से अवगत कराया।

मुनिराज के चरण सान्निध्य में श्रेष्ठी पुत्र ने बीसवाँ काव्य यथाविधि सीख लिया। उनकी मन्त्राराधना से प्रभावित भृकुटी देवी ने अष्ट सिद्धियाँ राजा को समर्पित कर दी। इस विस्मयकारी घटना से वीतराग धर्म का प्रभाव जगत में फैल गया।

जिनधर्म की भावना से श्रीधर कुमार ने इक्कीसवें काव्य मंत्र की साधना की तो मीरा देवी ने प्रगट हो उन्हें रत्नमय विमान में बिठाया और जिन चैत्यालय दर्शन, पूजन, वंदनादि का सौभाग्य प्रदान किया।

मुनिराज पर दैवीय उपसर्ग की चर्चा कर महीचन्द ने भक्तामर के बाईस-तेईसवें युगल काव्य का आराधन किया। मानस्थम्भिनी देवी प्रगट हुई। उसकी सौम्यता के सम्मुख रौद्ररूपिणी चण्डिका भी झुक गई तथा सम्यक्त्व को प्राप्त हुई।

वनक्रीड़ा से वापिस आते हुए कौशाम्बी नरेश की रानियों को वनदेवता ने विक्षिप्त कर दिया। जंगल में विराजमान मुनिमहाराज ने चौबीस-पच्चीसवें काव्य से मंत्रित जल रानियों पर छिड़क दिया। जिससे सभी सचेतन अवस्था को प्राप्त हो गयी।

दारिद्रय के दुःख से अत्यन्त पीड़ित धनमित्र ने मुनिराज द्वारा सिखाये गये छब्बीसवें काव्य का भावभक्ति पूर्वक जप किया। नागकुमारी देवी ने इस मध्य उसके ब्रह्मचर्य की परीक्षा ली किन्तु वह रंचमात्र नहीं डिगा। फलस्वरूप वह असीम संपदा को प्राप्त हुआ।

महाराज हरिश्चन्द्र ने सत्ताईसवें काव्य का त्रियोगपूर्वक जाप किया। धृतदेवी ने प्रगट होकर आशीर्वाद दिया। उसे महाप्रतापी गुणवान पुत्ररत्न की प्राप्ति हुई।

धारापुरी के राजा पृथ्वीपाल की पुत्री रूपकुण्डली ने दिगम्बर मुनिराज की निंदा की जिससे वह कोढ़ग्रस्त हो कुरूपता को प्राप्त हुई। स्वकृत पाप का प्रत्यक्ष फल देखकर वह पुनः मुनिराज के चरणों में गयी और आत्मनिंदापूर्वक अट्ठाईसवें काव्य मंत्र की तीन दिवस पर्यन्त आराधना की जिससे पूर्ववत् असीम सौन्दर्य को प्राप्त हुई।

अलकापुरी के सम्राट की प्रिया जयसेना मुनिनिंदा के फल से कोढ़ग्रस्त हुई परन्तु उनतीसवें काव्य का रूचिपूर्वक जाप करने से स्वस्थता को प्राप्त हुई।

गोपाल नामक ग्वाला दारिद्रय दुख से पीड़ित हो गुरु चरणों में पहुँचा। गुरु प्रसाद से प्राप्त तीस-इकत्तीसवें काव्य का विधिपूर्वक जाप करने से शीघ्र ही राजगद्दी पर आसीन हो राज्यसुख का उपभोग करने लगा।

महारानी मदनसुन्दरी पाप कर्म के उदय से पीड़ित हो कुरूपता एवं व्याधिग्रस्तता को प्राप्त हुई। मुनिराज के वचनानुसार बत्तीसवे-तैतीसवें काव्य का विधिपूर्वक जाप करने से वह असीम सौन्दर्य एवं स्वस्थ से युक्त हो गयी।

महाराजा भीमसेन पूर्व असाताकर्म के उदय से भयंकर व्याधिग्रस्त हो गये। बुद्धिकीर्ति मुनिराज द्वारा प्रदत्त चौतीस-पैंतीसवें काव्य की तीन दिन पर्यन्त साधना करने पर चक्रेश्वरी देवी उपस्थित हुई। वह रोग मुक्त हुए और दिगम्बरी दीक्षा धारण कर आयु के अन्त में समाधिमरण कर स्वर्गवासी हुए।

भूपति धरिवाहन की सुपुत्री सुरसुन्दरी जिनदेव-गुरु की निन्दा से तत्काल ही असाध्य रोग ग्रसित हो गयी परन्तु मुनिराज द्वारा छत्तीसवें काव्य से मंत्रित जल द्वारा स्नान करने पर सौन्दर्य व स्वास्थ्य से सुसज्जित हुई और जिनमत पर दृढ़ आस्थावान हो आर्यिका पद से विभूषित हुई।

सेठ जिनदास जी व्यापार में पुनः-पुनः घाटा हो जाने के कारण वैभव रहित हो गये। गुरूपदेश से प्राप्त सैतीसवें काव्य की मन-वचन-काय की विशुद्धिपूर्वक साधना करके पुनः विपुल सम्पत्ति के स्वामी बने।

वीरपुर के सम्राट सोमदत्त पुत्र ने दुराचार और पड़ोसी राजाओं द्वारा किये गये राज्याधिकृत दुःख से अत्यन्त व्याकुलित थे। वर्द्धमान मुनिराज के सदुपदेश से अड़तीसवें काव्य का यथाविधि जाप कर कुबेर जैसे सम्पदा और अप्रतिम सौन्दर्यशाली महारानी मनोरमा से विभूषित हुए।

श्रीपुर नगर के श्रेष्ठी साथियों सहित व्यापार के लिये जा रहे थे परन्तु मार्ग भूल जाने से भयंकर जंगल में पहुँच गये। विकराल सिंह को सन्मुख आता देखकर उनतालीसवें काव्य का पाठ श्रद्धापूर्वक करने लगे। जिनके प्रभाव से सिंह शान्त भाव को प्राप्त हो अणुव्रतों का धारी बना। बाद में जिसने भी इस घटना को सुना उसकी जैनधर्म, जिनधर्म के प्रति प्रगाढ़ आस्था बनी।

सेठ लक्ष्मीधर जी जब व्यापार के लिये सिंहलद्वीप की ओर जा रहे ते तब उनके डेरे से अकस्मात भयंकर अग्नि प्रज्वलित हो गयी। चालीसवें काव्यमंत्र से मंत्रित एक गिलास जल का सिंचन करने से अग्निज्वाला एकदम शान्त हो गयी।

श्रीमती दृढ़व्रता दुराचारिणी एवं पतिहत्या के पाप कलंक का प्रक्षालन करने की भावना से राजदरबार में गयी। उनके द्वारा इकतालीसवें काव्य का स्मरण करते ही सर्प पुष्प माला से परिवर्तित हो गया तथा मंत्रित जल पति पर छिड़कने से वह मूर्च्छारहित हो उठकर बैठ गया। यह चमत्कार देखकर अगणित लोगों ने जैनधर्म को अंगीकार कर लिया।

अपने भाई राजा को चतुरंगणी सेना सहित आता हुआ देखकर गुणवर्मा ने व्यालीस-तैतालीसवें काव्यमंत्रों की आराधना की जिसके प्रभाव से जिनशासन रक्षक चक्रेश्वरी देवी ने प्रगट होकर विशाल सेना की रचना कर दी एवं युद्ध में रणकेतु को बाँधकर विजयश्री का वरण किया।

ताम्रलिप्त नाम के श्रेष्ठी विदेश से व्यापार कर निजदेश की ओर गमन कर रहे थे। जलवासिनी व्यन्तरी देवी द्वारा जहाज रोक दिये जाने पर उन्होंने चवालीसवें काव्य का जाप किया जिससे जिनधर्म अधिष्ठात्री देवी ने प्रगट होकर उसकी रक्षा की।

राजपुत्र हंसराज को उनकी विमाता ने भोजन में दिनाई मिलाकर खिला दी जिससे वह अत्यन्त अस्वस्थता को प्राप्त हो गये। अनन्तर मुनिराज द्वारा बताये गये पैतालीसवें काव्यमंत्र का सात दिन तक आराधन करने से निरोग व कामदेव सदृश रूपवान हो गये, राज्यवैभव की भी प्राप्ति हुई।

कुँअर रणपाल सिंह को युद्ध में जीकर सुल्तान शाह ने हथकड़ी बेड़ियों से बाँधकर बन्दीगृह में डाल दिया। तृतीय दिवस छयालीसवें काव्य का जाप करने से जिनधर्म निष्ठा देवी ने प्रकट होकर उन्हें बंधन मुक्त कर दिया। इस प्रसंग को देख जिनधर्म की अतीव प्रभावना हुई।

लौकिक विभूति प्राप्ति, नीरोगता, सिंह, गज, अश्व, अग्नि आदि आपत्तियों से रक्षा होना आदि चमत्कार ही इस स्तोत्र के फल नहीं है किन्तु यह वह महास्तोत्र है जिसके प्रभाव से अक्षय, अनंत, अव्याबाध, अपरिमेय, असीम आनंद की प्राप्ति हो सकती है। शरीर पर पड़ी बेड़ियाँ ही नहीं कर्मरूपी बेड़ियाँ भी क्षण में टूट कर गिर सकती है। परमात्म पद की प्राप्ति हो सकती है। शक्ति स्त्री स्वरूपा है। श्री भक्तामर स्तोत्र में अधिष्ठित ब्राह्मी, चक्रेश्वरी आदि अनेक देवियाँ अपने भक्तों की मनोकामनाओं को पूर्ण कर उसके सौभाग्य में वृद्धि प्रदान करती हैं।

श्री भक्तामर स्तोत्र अड़तालीस छन्दों (मंत्रों) से अभिपूरित है। इसका कोई गुह्य अर्थ अवश्य है। सभी प्रकार की ऋद्धि-सिद्धियों का दायक और बन्धनों का निवारक यह स्तोत्र व्यक्ति के अष्ट कर्म x त्रिदोष (वात, पित्त, कफ) x 2 महाव्याधि (जन्म-मरण)= अड़तालिस बन्धनों से मुक्त कराकर मोक्ष को उपलब्ध कराने की सामर्थ्य से सहित है।

यह स्तोत्र विलक्षण परावैज्ञानिक सिद्धान्त हमें अवलोकन कराता है। ज्ञान अर्थात् जानने की प्रक्रिया में होने का परिणाम निहित रहता है। भक्तों की श्रद्धा के परिणामस्वरूप 'श्री आदिनाथ स्तोत्र' भक्तमार स्तोत्र में अवतरित हो गया। ऐसी महिमा अन्यत्र किसी 'इष्ट स्तोत्र' में दृष्टिगत नहीं होती। वास्तव में इस स्तोत्र की महिमा वर्णनातीत है।

❊❊❊

भक्तामर कथा

जिनेन्द्र प्रभु की भक्ति के माहात्म्य का सुफल संसार बंधन से विमुक्त होकर जन्म-मरण रहित परमात्मा बन जाना है। इसी शृंखला में आचार्यश्री मानतुंग महाराज ने आदिनाथ भगवान की भक्ति से एक अनोखा करिश्मा करके दिखाया। इसी भक्ति और भक्तामर स्तोत्र ने उन्हें अमर बना दिया। उस अमर गायक की कहानी और करिश्मा निम्न प्रकार है :-

ईसा की 11वीं शताब्दी में मालवा प्रान्त की उज्जैयनी नगरी में गुण ग्राही विद्या प्रेमी महाराज भोज शासन किया करते थे। उनको संस्कृत साहित्य एवं काव्य में प्रगाढ़ रुचि थी। उनके शासनकाल में संस्कृत भाषा ही राजभाषा थी, जिसके प्रचार एवं प्रसार हेतु निरन्तर अपार धन राशि राजकीय कोषागार की ओर से व्यय की जाती थी। महाराजा भोज की राजसभा में कविरत्न कालिदास और ब्राह्मण विद्वान् वररुचि उच्चकोटि के विद्वान् सभासद थे जिनके समक्ष तत्कालीन सुप्रसिद्ध विद्वान् भी नतमस्तक होते थे।

एक दिन नगर सेठ सुदत्त जी अपने प्रिय सुपुत्र मनोहर को साथ लेकर राजसभा में आये। महाराज भोज ने उनका अत्यधिक सम्मान किया। बालक के आकर्षक बुद्धि/प्रतिभा से प्रभावित होकर महाराज ने प्रश्न किया-''सेठ जी ! आपके यह बालक क्या अध्ययन कर रहे हैं ?'' सेठजी ने उत्तर दिया कि-''महाराज ! अभी इसका विद्यारम्भ ही है। इसने केवल नाममाला के श्लोक ही कंठस्थ किये हैं। अपने ही नगर के सुप्रसिद्ध विद्वान् स्याद्वाद विद्या पारंगत महाकवि धनंजय जी का यह ग्रन्थ एक वस्तु के अनेक पर्यायवाची शब्दों का ज्ञान कराने वाला अनूठा लघु शब्दकोष है।''

महाराज भोज कविवर धनंजय जी की पाण्डित्य प्रतिभा से भली-भाँति परिचित थे क्योंकि उन्होंने एक बार सभारत्न विद्वान् कवि कालिदासजी को वाद-विवाद प्रतियोगिता में अपना परिचय दिया था।

विचारशील राजा भोज बोले-''वास्तव में धनंजय जी जैसे विद्वानों से ही हमारी नगरी धन्य है। वे संस्कृत साहित्य की अलौकिक निधि हैं। इन जैसे विद्वान् ही हमारे संस्कृत साहित्य के प्रचार एवं प्रसार कार्यक्रम को सफलीभूत कर सकेंगे।''

विप्र कालिदास सभा में समुपस्थित थे, उनका जैन धर्मावलम्बियों से तो स्वाभाविक द्वेष था ही किन्तु महाकवि धनंजय जी से तो और भी विशेष द्वेष था। प्रतिद्वन्द्वी से बदला लेने का उचित समय हाथ आया देखकर बोले-''राजन् ! उस वणिक् धनंजय की बात तो छोड़ो, उसके गुरू मानतुंग को ही बुलवाकर हमसे शास्त्रार्थ करवा लीजिए, आपको विद्वान् की परीक्षा हो जावेगी। राजा भोज मानते थे कि विद्वान् धनंजय का पक्ष उस समय भी प्रबल रहा था, उनके गुरु तो और भी उच्चकोटि के विद्वान् होंगे।

अतः शास्त्रार्थ कौतूहल देखने के उद्देश्य से महाराज भोज ने महर्षि मानतुंग के निकट अपना दूत भेज दिया। दूत ने नगर उद्यान में विराजमान सौम्य मूर्ति से अपने स्वामी का सन्देश निवेदन किया कि भगवन् ! मालवाधीश महाराज भोज ने आपकी ख्याति सुनकर आपके दर्शनों की अभिलाषा व्यक्त की है और आपको राजसभा में बुलाया है अतः कृपा करके चलिये। रागद्वेष परित्यागी मुनिराज ने उत्तर दिया कि भाई ! राजद्वार से हमें क्या प्रयोजन है, हम खेती तथा वाणिज्य नहीं करते और न किसी प्रकार की याचना ही करते हैं। फिर राजा हमें क्यों बुलावेगा ? अस्तु साधुओं को राजा से कुछ सम्बन्ध नहीं है। अतः हम उनके पास जाना नहीं चाहते हैं। बेचारा दूत हताश होकर लौट आया तथा मुनिराज ने जो उत्तर दिया वह राजा को बता दिया। इस पर भी महाराज भोज निराश न हुए और उन्होंने पुनः सेवक, मुनिराज को विनम्रता के साथ ले आने के लिए भेजे फिर भी मुनिश्री नहीं आये। इस प्रकार चार बार दूत मुनिश्री को लेने गया परन्तु निराशा ही हाथ आयी। अब कालिदासजी के उकसाने से क्रोधावेश में महाराज ने जिस तरह भी संभव हो सके मुनिराज को पकड़कर लाने की आज्ञा दे दी। कई बार निराश होने के कारण भड़के हुए सेवक यह चाहते ही थे अतः आवेश में तत्काल मुनिश्री को पकड़ लाये और राजसभा में खड़ा कर दिया।

उस समय मुनिराज ने उपसर्ग समझ कर मौन धारण कर लिया था। राजा ने बहुत प्रयास किए कि यह महात्मा जी कुछ बोलें परन्तु उनके मुख से एक अक्षर भी नहीं निकला। तब कालिदास तथा अन्य विद्वेषी विप्र बोले कि महाराज ! यह कर्नाटक देश से निकाला हुआ यहाँ आकर रह रहा है तथा यह

महामूर्ख है। यह राजसभा एवं विद्वत् परिषद को देखकर भयभीत हो रहा है। आपका प्रताप न सह सकने के कारण कुछ बोलता नहीं है।

इस पर बहुत से श्रद्धालुओं ने मुनिश्री से विनीत भाव से नम्र निवेदन किया कि–''आप सन्त हैं, महा विद्वान् हैं, इस समय आपको कुछ धर्मोपदेश देना चाहिए, राजा विद्या विलासी हैं सुनकर सन्तुष्ट होंगे तथा जिनधर्म की प्रभावना भी होगी।'' परन्तु वे धीर–वीर महासाधु सुमेरु की तरह निष्कंप/निश्चल हो गये। समस्त जन समुदाय के प्रयास निरर्थक रहे वे मुनिराज की किंचित् वाणी भी न सुन के। इस पर राजा भोज ने क्रोधावेश में आकर आदेश दिया कि–इनको मजबूत लोहे की सांकलों से बाँधकर अड़तालीस कोठरियों के भीतर बन्दीगृह में बन्दी बनाकर मजबूत ताले लगा दिये जावें तथा पहरेदार भी बैठा दिये जावें।

सारी उज्जयनी नगरी में हा–हाकार मच गया, योगीराज मानुतंगाचार्य तीन दिन–रात 75 घंटे बन्दीगृह में कायोत्सर्ग ध्यान में लीन रहे। चौथे दिवस अपने अन्तर ध्यान में हृदय कमल पर विराजे युगादि तीर्थंकर श्री आदिनाथ जिनेन्द्र का अड़तालीस काव्य जो ऋद्धि, मंत्र गर्भित थे रचकर स्तवन किया। ज्यों ही स्तोत्र पूर्ण हुआ त्यों ही हथकड़ी, बेड़ी और समस्त ताले टूट गये और खट–खट बन्दीगृह के पट खुल गये। उपसर्ग दूर समझ मुनिराज बाहर निकल कर चबूतरे पर आ विराजे। यह देखकर पहरेदार बड़े चिन्तित हुए उन्होंने बिना किसी से कहे सुनें फिर उसी तरह बन्दी बना लिया परन्तु कुछ समय पश्चात् पुनः वही दशा हुई कि वे सकलव्रती मुनिराज बाहर निकलकर सीधे राजसभा में ही जा पहुँचे।

मुनिराज जी के दिव्य शरीर के प्रभाव से राजा का हृदय काँप गया। उन्होंने कालिदास को बुलाकर कहा कि–कविराज ! मेरा आसन कम्पित हो रहा है, मैं अब इस सिंहासन पर क्षणभर भी नहीं ठहर सकता हूँ। कालिदास ने राजा को धैर्य बँधाया और उसी समय योगासन बैठकर कालिका स्तोत्र पढ़ना प्रारम्भ कर दिया। जिसके प्रभाव से कालिका देवी प्रकट हुई।

इतने में मुनिराज के निकट चक्रेश्वरी देवी ने प्रत्यक्ष होकर दर्शन दिए। देवी चक्रेश्वरी का भव्य सौम्य तथा कालिका का विकराल प्रचण्ड रूप

देखकर राज्यसभा चकित हो गयी। देवी चक्रेश्वरी ने ललकार कर रहा कि–कालिके तू यहाँ क्यों आयी ? क्या अब तूने मुनि, महाराजों पर उपसर्ग करने की ठानी है। अच्छा, देख अब मैं तेरी कैसी दशा करती हूँ। प्रभावशालिनी चक्रेश्वरी की भृकुटी चढ़ी देखकर कुटिल कालिका काँप गयी और प्रार्थना करके कहने लगी कि–हे माता ! क्षमा करो, अब मैं ऐसा कृत्य कभी नहीं करूँगी। इस पर चक्रेश्वरी देवी ने काली को बहुत सा धर्मोपदेश दिया और कहा कि–''मैं श्री आदिनाथ जिनेन्द्र की मुख्य सेविका हूँ। उनकी भावपूर्ण अक्षुण्ण भक्ति श्री मुनि मानतुंगाचार्य ने अड़तालीस श्लोकों में की, मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई और मैंने ही राजा भोज के कारागार से बन्धन मुक्त कर महात्मा मुनि मानतुंग को यहाँ लाकर विराजमान कर दिया। इसी प्रकार अप्रत्यक्ष रूप से सभी भक्तों के कार्य पूर्ण करना मेरा ध्येय है।'' कहकर अन्तर्ध्यान हो गयी।

इसके पश्चात् कालिका ने मुनिश्री से क्षमा प्रार्थना की तथा उनकी स्तुति भी की और तत्पश्चात् वह भी अदृश्य हो गयी।

राजा भोज और कालिदास ने मुनिराज का प्रताप देखकर क्षमा याचना की और बड़े भक्तिभाव से स्तुति की। योगीराज मुनिश्री मानतुंगाचार्य ने मौन त्याग कर उपदेशामृत की वर्षा की। राजा भोज ने प्रभावित होकर मुनिराज से श्रावक के व्रत लिए और अपने राज्य में जैन धर्म का विशेष प्रचार एवं प्रसार कराया। श्रेष्ठी सुदत्त एवं जिनेन्द्र भक्त कविवर धनंजय को भी जैनधर्म की प्रभावना से महान् हर्ष हुआ। श्री जिनेन्द्र देव की भक्ति से तालों की क्या जन्म–जन्मान्तरों में बंधें कर्म बन्धन भी खुल जाते हैं।

भगवद्भक्ति से सांसारिक भोग सामग्री का मिलना उसी प्रकार है जैसे कि गेहूँ के खेत में बिना बोये घास–फूस का उत्पन्न होना। हे प्रभो ! मैं जन्म–रूपी जीर्ण जंगल में जन्मान्ध होकर परिभ्रमण कर रहा हूँ–ठोकरें खाता फिर रहा हूँ। अतएव सन्मार्ग दिखाने वाली आपकी भक्ति मेरे लिये समीचीन मुक्ति को देने वाली हो।

जो पुरुष त्रिकाल जिनेन्द्रदेव की वन्दना नमस्कार करता है उसके परिणाम अत्यन्त निर्मल हो जाते हैं और विशुद्ध परिणामों के होने से उसके समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं। ***

एकीभाव स्तोत्र पूजन

(स्थापना)

वादिराज मुनिराज काज यह, अनुपम कीन्हे।
एकीभाव स्तोत्र भाव से, रच शुभ दीन्हे।।
शुभ स्तोत्र पाठकर, कीन्हें कुष्ठ निवारण।
हम पावन स्तोत्र का, करते हैं आह्वानन।
हृदय कमल पर आनकर, हे जिनेन्द्र ! अविकार।
तव चरणों में हम करें, वन्दन बारम्बार

ॐ ह्रीं श्री वादिराज मुनि रचित एकीभाव स्तोत्र ! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् आह्वाननं।
ॐ ह्रीं श्री वादिराज मुनि रचित एकीभाव स्तोत्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।
ॐ ह्रीं श्री वादिराज मुनि रचित एकीभाव स्तोत्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(शम्भू छंद)

सदियों से हमको हे भगवन् !, इस तृषा रोग ने घेरा है।
हम जन्म मरण करते आए, न मिटा आज तक फेरा है।।
हो नाश मेरा जन्मादि जरा, हम नीर चढ़ाने आए हैं।
जो पद पाया है प्रभु तुमने, उसके हम भाव बनाए हैं।।1।।

ॐ ह्रीं श्री वादिराज मुनि विरचित एकीभाव स्तोत्र जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

संसार ताप ने सदियों से, प्रभु मोह जाल ने घेरा है।
उपचार अनेकों किए मगर, ना मिटा आज तक फेरा है।।
हम भव आताप विनाश करें, यह गंध चढ़ाने लाए हैं।
जो पद पाया है प्रभु तुमने, उसके हम भाव बनाए हैं।।2।।

ॐ ह्रीं श्री वादिराज मुनि विरचित एकीभाव स्तोत्र संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

करके कर्मों का नाश प्रभो !, कंचन सा तन तुमने पाया।
न अक्षय पद हमने पाया, वह पद पाने मन ललचाया।।
हम अक्षय पद के भाव लिए, शुभ यहाँ चढ़ाने लाए हैं।
जो पद पाया है प्रभु तुमने, उसके हम भाव बनाए हैं।।3।।

ॐ ह्रीं श्री वादिराज मुनि विरचित एकीभाव स्तोत्र अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

भव-भव में पुष्पों से भगवन् !, हमने जीवन को महकाया।
सदियों से काम वासना को, न पूर्ण आज तक कर पाया।।
हम काम वासना नाश हेतु, यह पुष्प मनोहर लाए हैं।
जो पद पाया है प्रभु तुमने, उसके हम भाव बनाए हैं।।4।।

ॐ ह्रीं श्री वादिराज मुनि विरचित एकीभाव स्तोत्र कामबाणविध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

इस क्षुधा वेदना से भगवन् !, सारा यह लोक भ्रमाया है।
इच्छाएँ पूर्ण न हो पाईं, बहु भोजन हमने खाया है।।
हो क्षुधा रोग का नाश पूर्ण, नैवेद्य चढ़ाने लाए हैं।
जो पद पाया है प्रभु तुमने, उसके हम भाव बनाए हैं।।5।।

ॐ ह्रीं श्री वादिराज मुनि विरचित एकीभाव स्तोत्र क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अज्ञान अंधेरे में भगवन् !, यह प्राणी जग के भटक रहे।
मिथ्यात्व कषायों में फँसकर, जो माया मोह में अटक रहे।।
हम मोह अन्ध के नाश हेतु, यह दीप जलाकर लाए हैं।
जो पद पाया है प्रभु तुमने, उसके हम भाव बनाए हैं।।6।।

ॐ ह्रीं श्री वादिराज मुनि विरचित एकीभाव स्तोत्र मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्नी में तप की हे भगवन् !, कर्मों की धूप जले मेरी।
अब अष्ट कर्म हों नष्ट मेरे, न लगे प्रभु इसमें देरी।।
हम अष्ट कर्म के नाश हेतु, यह गंध जलाने आये हैं।
जो पद पाया है प्रभु तुमने, उसके हम भाव बनाए हैं।।7।।

ॐ ह्रीं श्री वादिराज मुनि विरचित एकीभाव स्तोत्र अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल रत्नत्रय का हे भगवन् !, सारे जग से अनुपम होता।
जो धारण करता भाव सहित, वह कर्म कालिमा को खोता।।
हम मोक्ष महाफल पाने को, अब श्रेष्ठ सरस फल लाए हैं।
जो पद पाया है प्रभु तुमने, उसके हम भाव बनाए हैं।।8।।

ॐ ह्रीं श्री वादिराज मुनि विरचित एकीभाव स्तोत्र मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

उपसर्ग परीषह हे भगवन् !, हमको न बढ़ने देते हैं।
जो धर्म साधना की क्षमता, सब जीवों की हर लेते हैं।।
हम पद अनर्घ पाने हेतू, यह अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।
जो पद पाया है प्रभु तुमने, उसके हम भाव बनाए हैं।।9।।

ॐ ह्रीं श्री वादिराज मुनि विरचित एकीभाव स्तोत्र अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– निर्मल जल से हम यहाँ, देते शांती धार।
विधि पूजा की पूर्ण हो, आगम के अनुसार।।

शान्तये शांतिधारा

दोहा– पुष्पाञ्जलि करते यहाँ, पुष्पाञ्जलि ले हाथ।
अर्चा करते आपकी, मुक्ती पाने नाथ।।

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

जयमाला

दोहा– वादिराज मुनिराज का, आया मन में ख्याल।
एकीभाव स्तोत्र की, गाते हैं जयमाल।।

चौपाई

एकीभाव स्तोत्र महान्, करता रोग शोक की हान।
भाव सहित करके गुणगान, प्राणी करते हैं कल्याण।।
महिमाशाली यह स्तोत्र, पावन कहा धर्म का स्रोत।
जिसकी महिमा अपरम्पार, श्रेष्ठ रहा जो मंगलकार।।

पढ़कर प्राणी पाते बोध, भाव सहित जो पढ़ते शोध।
सरल सुबोध रहे शुभ छन्द, प्राणी पाते हैं आनन्द।।
श्री जिनेन्द्र को हृदय बसाय, भाव सहित जो महिमा गाय।
धन वैभव सुख शांती पाय, अपने सारे कर्म नशाय।।
पढ़कर प्राणी पाए ज्ञान, भाव सहित करके गुणगान।
नर भव उनका बना महान्, पाया जीवों ने कल्याण।।
इस जीवन का पाया सार, मंगल कीन्हा अपरम्पार।
जागा अन्तर में श्रद्धान, क्षण में पाया सम्यक् ज्ञान।।
सम्यक् चारित पाए जीव, पुण्य बन्ध फिर किए अतीव।
सम्यक् तप करके निज ध्यान, कर्म निर्जरा हुई महान्।।
अंतिम पाए केवलज्ञान, स्तुति का फल रहा प्रधान।
बनें हमारे ऐसे भाव, पा जाएँ हम निज स्वभाव।।
हृदय बसो हे दीनदयाल, इसीलिए गाते जयमाल।
जब तक मेरी चलती श्वाँस, तव चरणों में हो मम वास।।
भव–भव में प्रभु देना साथ, झुका रहे तव चरणों माथ।
ये ही है अन्तिम अरदास, और न कोई मन में आस।।
तुम ही बनो हमारे नाथ, चरणों झुका रहे हम माथ।
चरणों में करते गुणगान, होय 'विशद' मेरा कल्याण।।

दोहा– नेता मुक्ती मार्ग के, सद् गुण के भण्डार।
शीश झुकाते तव चरण, नत हो बारम्बार।।

ॐ ह्रीं श्री वादिराज मुनि विरचित एकीभाव स्तोत्र जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा– तीन लोक के नाथ तुम, हे त्रिभुवन पति ईश।
आशा मेरी पूर्ण हो, झुका रहे हम शीश।।

।। इत्याशीर्वादः ।।

एकीभाव स्तोत्र की कथा

''आचार्य वादिराज मुनिवर राज्य उद्यान में साधनारत् हैं, तभी राज्यमंत्री आकर के उन दिगम्बर मुनिराज को देखता है, जैनधर्म से विद्वेष रखने वाला यह मन्त्री राजसभा में राजा के पास जाकर मुनि निन्दा करते हुए कहता है–हे राजन् ! आपके राज्य उद्यान में नंगा साधु आया है, जिसके सम्पूर्ण शरीर में कुष्ठ रोग व्याप्त है, वह साधु जैनधर्म का गुरू कहलाता है। अज्ञानी और मलीन शरीर वाले ऐसे पाखण्डी को राज्य उद्यान से निकाल देना चाहिए। विद्वेष पूर्ण वार्तालाप एवं मुनि निन्दा राज्यमंत्री के मुख से सुनते ही एक जैन श्रावक से सहन न हुई और होती भी कैसे ? श्रावक के अंदर थी सच्ची गुरु भक्ति, वह बीच में ही बोल पड़ा– हे राजन् ! राज्यमंत्री आप से झूठ कह रहे हैं, जैन मुनि तो सर्वांग, सुन्दर, स्वस्थ, प्रसन्न, वीतराग मुद्रा के धारक होते हैं। मुनिराज को कुष्ठ रोग नहीं है, वह तो कुन्दन की तरह कांतिमान काया वाले हैं।

राजा ने कहा आप दोनों में कौन सत्य कहता है, इसका निर्णय प्रातःकाल राज्य उद्यान में चलकर मुनिराज के पास ही करेंगे। राजा के उक्ताशय भरे विचार सुनकर जैन श्रावक संध्याकाल में ही मुनिराज के पास आया और कहने लगा–हे मुनिवर ! आप दयामूर्ति, करूणासागर, गुण–भंडार, वीतराग, निःस्पृही साधु हैं, आपको अपने तन से जरा–सा भी अनुराग नहीं है पर आज मेरे कारण धर्म के ऊपर संकट आन पड़ा है। उसने समस्त वृत्तांत मुनिराज से कह सुनाया। मुनिराज ने मन में विचार कर कि श्रावक सच्चे देव, शास्त्र, गुरू का भक्त है। यदि इस समय इसकी रक्षा न की गई तो श्रावक पर कष्ट आ सकता है, धर्म की निन्दा भी हो सकती है। अतः वादिराज मुनिवर रात्रिभर ध्यानस्थ होकर वीतराग प्रभु की भक्ति में तन्मय हो जाते हैं, अंतरंग श्रद्धा से की गई भक्ति चमत्कार पैदा कर देती है। मुनिराज का कुष्ठ रोग समाप्त होने लगता है.....उस समय मुनिराज को स्मरण आता है, यदि सम्पूर्ण शरीर कंचन देही हो जाएगा तो अन्य किसी पर संकट न आन पड़े। इस महान् भावना से भक्ति को विराम देते हैं। मात्र एक अंगुली में जरा–सा कुष्ठ रोग शेष रह जाता है।

प्रातःकाल राजा आता है, दूर से ही कंचन देही मुनिराज को देखकर प्रसन्न हो जाता है। साष्टांग प्रणाम कर पूजा, अर्चना करके धर्मोपदेश श्रवण करता है। पश्चात् मन में विचारता है कि देखो, हमारा मंत्री कितना कपट करता है, मुनिराज को कुष्ठ रोगी कह रहा था, ऐसे मन्त्री को सजा अवश्य देना चाहिए। राजा दण्ड सुनाने के लिए तैयार होता है कि उसके पूर्व ही मुनिराज बोल उठते हैं, हे राजन ! कर्मोदय बड़ा बलवान है, अशुभ कर्मोदय से मुझे कुष्ठ रोग था, देखो इस अंगुली की ओर...

जिनेन्द्र भक्ति के प्रभाव से समस्त, आधि, व्याधि, रोग–शोक, आपत्ति–विपत्ति दूर हो जाते हैं, दुःख भी सुख में बदल जाता है। सच्ची श्रद्धा से की गई जिनेन्द्र प्रभु की उपासना (एकीभाव स्तोत्र) से मेरा यह कुष्ठ रोग दूर हुआ। जो कुछ शेष है, वह भी इसी के द्वारा दूर होगा। राजा के समक्ष ही मुनिराज एकीभाव स्तोत्र पूर्ण करते हैं जिसके प्रभाव से मुनिराज का सर्व शरीर कुष्ठ रहित स्वर्ण कांति युक्त हो जाता है। राजा आश्चर्यचकित रह जाता है। धन्य है जैन मुनि की तपश्चर्या, धन्य है जैनधर्म की महिमा।

दोहा– एकीभाव स्तोत्र का, करे भाव से पाठ।
सुख शांति सौभाग्य पा, होंगे ऊँचे ठाठ।।

तब से आज तक यह एकीभाव स्तोत्र चला आ रहा है, यह एक महान स्तोत्र है; किन्तु संस्कृत भाषा में एवं छन्दोच्चारण जटिल होने से जन सामान्य इस स्तोत्र की महिमा से परिचित नहीं हो पाया है।

दुनियाँ के लोग तो दुनियाँ की बात करते हैं।
दुनियाँ के मोह में पड़कर स्वयं का घात करते हैं।।
'विशद' संत तो आत्मा का बोध जगाते हैं।
संत कल्याण की बात को आत्म शात करते हैं।।

एकीभाव स्तोत्र पर ही सरल भाषा में आचार्य श्री 108 विशदसागरजी महाराज ने इस एकीभाव स्तोत्र महामण्डल विधान की रचना की है। संकट के क्षणों में यह विधान कर जीवन को सौभाग्यशाली बनाएँ।

***

एकीभाव स्तोत्र व्रत विधि

एकीभाव स्तोत्र में छब्बीस पद्य हैं, उन काव्यों के अनुसार छब्बीस (26) व्रत किये जाते हैं। उत्तम विधि उपवास, मध्यम अल्पाहार और जघन्य व्रत एकाशन करना है। इसमें तिथियाँ खुली हैं, जब जो तिथि सुविधाजनक हो, उसी दिन व्रत करें। व्रत के दिन स्तोत्र पाठ करें। चौबीस तीर्थंकर भगवान की प्रतिमा का पंचामृत अभिषेक करके पूजा करें पुनः प्रत्येक मंत्र पृथक्–पृथक् हैं, उनमें से एक–एक जाप्य करें।

समुच्चय मंत्र–ॐ ह्रीं सर्वव्याधिविनाशनसमर्थाय श्रीतीर्थंकर परमदेवाय नमः।

प्रत्येक व्रत के पृथक्–पृथक् मंत्र–

1. ॐ ह्रीं एकीभावसदृशकर्मबंधनाशनसमर्थाय श्रीतीर्थंकर परमदेवाय नमः।

2. ॐ ह्रीं हृदयस्थितपापान्धकारविनाशनसमर्थाय ज्योतीरूपाय श्रीतीर्थंकर परमदेवाय नमः।

3. ॐ ह्रीं स्तोत्रमंत्रप्रभावेनदेहस्थविषव्याधिनिष्कासनसमर्थाय श्रीतीर्थंकर परमदेवाय नमः।

4. ॐ ह्रीं गर्भावतारप्राक् पृथ्वीकनकमयकरणसमानभाक्तिकतनु–सुवर्णीकरणसमर्थाय श्रीतीर्थंकर परमदेवाय नमः।

5. ॐ ह्रीं भक्तजनहृदयस्थिततत्सर्वक्लेशविनाशनसमर्थाय श्रीतीर्थंकर परमदेवाय नमः।

6. ॐ ह्रीं त्वन्नयकथापीयूषवापीमध्यनिर्मग्नभाक्तिकदुःखदावोप–तापशांतकरणसमर्थाय श्रीतीर्थंकर परमदेवाय नमः।

7. ॐ ह्रीं पादन्यासस्थलस्वर्णकमलमिवत्वत्स्पृशन्ममभक्तस्य–सर्वश्रेयः प्रदायकाय श्रीतीर्थंकर परमदेवाय नमः।

8. ॐ ह्रीं भक्तिपात्र्यात्वद्वचनामृतपिबन्भाक्तिक दुर्वाररोगनिवारण–समर्थाय श्रीतीर्थंकर परमदेवाय नमः।

9. ॐ ह्रीं मानस्तम्भसदृश–त्वत्समीपत्वप्राप्तभाक्तिकजनमान–रोगहरणसमर्थाय श्रीतीर्थंकर परमदेवाय नमः।

10.ॐ ह्रीं त्वन्मूर्तिस्पर्शितवायुना निरवधिरोगधूलिधुन्वन्समर्थाय श्रीतीर्थंकर परमदेवाय नमः।

11.ॐ ह्रीं भाक्तिकजनभव–भवदुःखनिवारणसमर्थपरमदयालु–सर्वेशाय श्रीतीर्थंकर परमदेवाय नमः।

12.ॐ ह्रीं मणिजयमालिकया त्वन्नमस्कारमंत्रजपद्भाक्तिकगण–स्वर्गलक्ष्मीप्रभुत्वकरण–समर्थाय श्रीतीर्थंकर परमदेवाय नमः।

13.ॐ ह्रीं अनवधिस्त्वदुत्कृष्टभक्तिकुञ्चिकानिमित्तेनमुक्ति–द्वारोद्घाटनकारण–समर्थाय श्रीतीर्थंकर परमदेवाय नमः।

14.ॐ ह्रीं भवद्भारतीरत्नदीपेन मुक्तिपथावलोकनसामर्थ्य–प्रदायकाय श्रीतीर्थंकर परमदेवाय नमः।

15.ॐ ह्रीं कर्मक्षोणीपिहितात्मज्योतीनिधिप्रदायकाय श्रीतीर्थंकर परमदेवाय नमः।

16.ॐ ह्रीं त्वद्भक्तिगंगामध्यावगाहकभक्तगणसर्वकल्मष–क्षालनसमर्थाय श्रीतीर्थंकर परमदेवाय नमः।

17. ॐ ह्रीं त्वद्ध्यायन्भाक्तिकस्य सोऽहमितिमतिप्रदायकाय श्रीतीर्थंकर परमदेवाय नमः।

18.ॐ ह्रीं सप्तभंगीतरंगयुत–त्वद्वाक्यसमुद्रमंथनोद्भवपरमामृत–प्रापकाय श्रीतीर्थंकर परमदेवाय नमः।

19.ॐ ह्रीं शस्त्रवसनभूषाविरहितपरमसुंदरस्वरूपाय श्रीतीर्थंकर परमदेवाय नमः।

20.ॐ ह्रीं भवसमुद्रपारंगतसिद्धिकान्तापतित्रैलोक्यप्रभु–स्तुतिश्लाघनाय श्रीतीर्थंकर परमदेवाय नमः।

21. ॐ ह्रीं भक्तिपीयूषपुष्पभव्यगणाभिमतफलप्रदपारिजाताय श्रीतीर्थंकर परमदेवाय नमः।

22.ॐ ह्रीं कोपप्रसादविरहितपरमोपेक्षि–भुवनतिलकप्राभवसहिताय श्रीतीर्थंकर परमदेवाय नमः।

23.ॐ ह्रीं सकलतत्त्वग्रन्थस्मरणविषयिबुद्धिप्रदायकाय श्रीतीर्थंकर परमदेवाय नमः।

24.ॐ ह्रीं अनंतसुखज्ञानदृग्वीर्यरूपाय भाक्तिकजनपञ्चकल्याण–प्रदायकाय श्रीतीर्थंकर परमदेवाय नमः।

25. ॐ ह्रीं स्वात्माधीनसुखेच्छुकजनकल्याणकल्पद्रुमाय श्रीतीर्थंकर परमदेवाय नमः।

26.ॐ ह्रीं शाब्दिक–तार्किक–काव्यकृत–भव्यगणोत्कृष्ट श्रीवादिराजसूरिकृत–एकीभावस्तोत्रस्वामिने श्रीतीर्थंकर परमदेवाय नमः।

यह व्रत सर्व प्रकार के रोगों को शांत करके शरीर को आरोग्य प्रदान करने वाला है और परम्परा से आत्मा को स्वस्थ–शुद्ध करके अतीन्द्रिय मोक्षसुख प्राप्त कराने वाला है। साथ ही संसार के भी उत्तम–उत्तम सुखों को देने वाला है।

***

महामंत्र णमोकार पूजा

स्थापना

णमोकार महामंत्र जगत में, सब मंत्रों से न्यारा है।
ऋद्धि–सिद्धि सौभाग्य प्रदायक, अतिशय प्यारा प्यारा है।।
श्रद्धा भक्ति से जो प्राणी, महामंत्र को ध्याते हैं।
सुख–शांति आनन्द प्राप्त कर, शिव पदवी को पाते हैं।।
सब मंत्रों का मूल मंत्र है, करते हम उसका अर्चन।
विशद हृदय में आह्वानन कर, करते हैं शत् शत् वन्दन।।

ॐ ह्रीं श्री अनादि अनिधन पंचनमस्कार मंत्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्। अत्र मम् सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणं।

(छंद–मोतियादाम)

हमने इस तन को धो–धोकर, सदियों से स्वच्छ बनाया है।
किन्तु क्रोधादि कषायों ने, चेतन में दाग लगाया है।।
अब चित् के निर्मल करने को, यह नीर चढ़ाने लाए हैं।
हम महामंत्र की पूजा कर, सौभाग्य जगाने आए हैं।।

ॐ ह्रीं श्री अनादि अनिधन पंच नमस्कार महामंत्राय जन्म–जरा–मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चेतन का काल अनादि से, पुद्गल से गहरा नाता है।
कर्मों की अग्नि धधक रही, संताप उसी से आता है।।
अब शीतल चंदन अर्पित कर, संताप नशाने आए हैं।
हम महामंत्र की पूजा कर, सौभाग्य जगाने आए हैं।।

ॐ ह्रीं श्री अनादि अनिधन पंच नमस्कार महामंत्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय अखण्ड आतम अनुपम, खण्डित पद में रम जाती है।
स्पर्श गंध रस रूप मिले, उनसे मिलकर भटकाती है।

अब अक्षय अक्षत चढ़ा रहे, अक्षय पद पाने आये हैं।
हम महामंत्र की पूजा कर, सौभाग्य जगाने आए हैं।।

ॐ ह्रीं श्री अनादि अनिधन पंच नमस्कार महामंत्राय अक्षयपद प्राप्ताय अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

मन काम वासना से वासित, तन कारागृह में रहता है।
आयु के बन्धन में बंधकर, जो दुःख अनेकों सहता है।।
अब काम वासना नाश हेतु, यह पुष्प चढ़ाने लाए हैं।
हम महामंत्र की पूजा कर, सौभाग्य जगाने आए हैं।।

ॐ ह्रीं श्री अनादि अनिधन पंच नमस्कार महामंत्राय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

सदियों से भोजन किया मगर, नित प्रति भूखे हो जाते हैं।
चेतन की क्षुधा मिटाने को, न ज्ञानामृत हम पाते हैं।।
अब क्षुधा व्याधि के नाश हेतु, नैवेद्य चढ़ाने लाए हैं।
हम महामंत्र की पूजा कर, सौभाग्य जगाने आए हैं।।

ॐ ह्रीं श्री अनादि अनिधन पंच नमस्कार महामंत्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चेतन की आभा के आगे, दिनकर भी शरमा जाता है।
आवरण पड़ा वसु कर्मों का, स्वरूप नहीं दिख पाता है।।
अब मोह अन्ध के नाश हेतु, यह दीप जलाकर लाए हैं।
हम महामंत्र की पूजा कर, सौभाग्य जगाने आए हैं।।

ॐ ह्रीं श्री अनादि अनिधन पंच नमस्कार महामंत्राय मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

हो तीव्रोदय जब कर्मों का, पुरुषार्थ हीन पड़ जाता है।
यह जीव शुभाशुभ कर्मों के, फल से सुख–दुःख बहु पाता है।।
अब अष्ट कर्म का यह ईंधन, शुभ आज बनाकर लाए हैं।
हम महामंत्र की पूजा कर, सौभाग्य जगाने आए हैं।।

ॐ ह्रीं श्री अनादि अनिधन पंच नमस्कार महामंत्राय अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

नर गति में जन्म हुआ मेरा, यह पूर्व पुण्य की माया है।
इसमें भी पाप कमाया है, न मोक्ष महाफल पाया है।।
अब मोक्ष महाफल पाने को, यह सरस-सरस फल लाए हैं।
हम महामंत्र की पूजा कर, सौभाग्य जगाने आए हैं।।

ॐ ह्रीं श्री अनादि अनिधन पंच नमस्कार महामंत्राय महामोक्षफल प्राप्ताय फलं निर्वपामीति स्वाहा।

हैं आठ कर्म के ठाठ महा, जीवों को दास बनाते हैं।
मोहित करके सारे जग को, वह बारम्बार नचाते हैं।।
हो पद अनर्घ शुभ प्राप्त हमें, यह अर्घ्य चढ़ाने लाए हैं।
हम महामंत्र की पूजा कर, सौभाग्य जगाने आए हैं।।

ॐ ह्रीं श्री अनादि अनिधन पंच नमस्कार महामंत्राय अनर्घ्य पद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मंत्रित कर महामंत्र से, प्रासुक नीर महान्।
शांतिधारा दे रहे, करके हम गुण गान।। *शांतिधारा.....*
पुष्पांजलि को पुष्प यह, पुष्पित लिए महान्।
महामंत्र का जाप कर, करने को गुणगान।। *पुष्पांजलि.....*

जयमाला

दोहा- **परमेष्ठी की वन्दना, प्राणी करें त्रिकाल।**
महामंत्र नवकार की, गाते हम जयमाल।।

(चाल छन्द)

हम महामंत्र को गायें, उसमें ही ध्यान लगाएँ।
निज हृदय कमल में ध्यायें, फिर सादर शीश झुकाएँ।।
शुभ पाँच सुपद हैं भाई, पैंतिस अक्षर सुखदायी।
हैं अट्ठावन मात्राएँ, बनती हैं कई विधाएँ।।

प्राकृत भाषा में जानों, बहु अतिशयकारी मानो।
पाँचों परमेष्ठी ध्याते, उनके चरणों सिर नाते।।
पहले अर्हत् को ध्याते, जो केवल ज्ञान जगाते।
फिर सिद्धों के गुण गाते, जो अष्ट गुणों को पाते।।
जो रत्नत्रय के धारी, हैं जन-जन के उपकारी।
हम आचार्यों को ध्याते, जो छत्तिस गुण को पाते।।
जो पच्चिस गुण के धारी, हैं जन-जन के उपकारी।
सब साधु ध्यान लगाते, निज आतम ज्ञान जगाते।।
जो परमेष्ठी को ध्याते, वह परमेष्ठी बन जाते।
फिर कर्म निर्जरा करते, अपने कर्मों को हरते।।
कई अर्हत् पदवी पाते, वह तीर्थंकर बन जाते।
फिर केवल ज्ञान जगाते, कई देव शरण में आते।।
वह समवशरण बनवाते, सब दिव्य देशना पाते।
हे भाई ! श्रद्धा धारो, अपना श्रद्धान सम्हारो।।
हम यही भावना भाते, जिन पद में शीश झुकाते।
नित परमेष्ठी को ध्यायें, हम भावसहित गुण गायें।।
अनुक्रम से मुक्ति पावें, भवसागर से तिर जावें।
हम शिव सुख में रम जावें, इस भव का भ्रमण नशावें।।

दोहा- **महामंत्र के जाप से, नशते हैं सब पाप।**
कर्मों का भी नाश हो, मिट जाए संताप।।

ॐ ह्रीं श्री अनादि अनिधन पंच नमस्कार महामंत्रेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दोहा- **परमेष्ठी जिन पाँच के, चरण झुकाते शीश।**
पुष्पांजलि कर पूजते, सुर नर इन्द्र मुनीश।।

(इत्याशीर्वादः पुष्पांजलि क्षिपेत्)

णमोकार मंत्र की महिमा

एक बार कुमार पार्श्वनाथ वन–भ्रमण करने के लिए गए। एक स्थान पर उन्होंने पाँच–सात पाखण्डी साधुओं को हवन करते हुए देखा। जैसे ही पार्श्वकुमार की दृष्टि हवन लगी कुंड में लकड़ी पर पड़ी तो वे अपने अवधिज्ञान से जान गए कि इस लकड़ी के अंदर नाग और नागिन हैं। वे तुरन्त पाखण्डी साधु के पास गए और बोले–हे तापस ! इस लकड़ी को तुमने हवन–कुंड में क्यों डाला? देखो इसे, इसमें नाग और नागिन जल रहे हैं?

पाखण्डी साधु ने कहा–रे बालक ! तू झूठ बोल रहा है। इसमें नाग और नागिन नहीं जल रहे हैं। पार्श्वकुमार ने कहा–यदि तुम्हें विश्वास नहीं हो तो उस लकड़ी को निकालो और चीर कर देखो।

साधुओं ने लकड़ी निकाली और लकड़ी को चीरना प्रारम्भ किया। जैसे ही लकड़ी को चीरा वैसे ही उसमें से अधजले तड़पते नाग और नागिन निकले। तड़पते नाग–नागिन को देखकर पार्श्वकुमार ने उनको णमोकार मंत्र सुनाया। दोनों ने भावों से णमोकार मंत्र सुना और मरण को प्राप्त हो गए।

मरण के बाद नाग और नागिन धरणेन्द्र और पद्मावती नाम के देव और देवी हुए।

(1) जीवन्धर ने मरते समय कुत्ते को 'णमोकार मंत्र' सुनाया था जिससे स्वर्ग गया था। (2) चारुदत्त ने बकरे को मरते समय 'णमोकार मंत्र' सुनाया था तो वह स्वर्ग का देव बना। (3) वृषभदत्त सेठ ने बैल को 'णमोकार मंत्र' सुनाया था तो वह मरकर सुग्रीव के रूप में राजा बना था। (4) तोते को णमोकार मंत्र रत्नमाला ने सुनाया था तो वह मरकर देव बना था।

णमोकार मंत्र के व्रत की विधि :– आषाढ़ सुदी सप्तमी से प्रारम्भ कर क्रमशः 7 सप्तमी, कार्तिक वदी पञ्चमी से क्रमशः 5 पञ्चमी, पौष सुदी चतुर्दशी से क्रमशः 14 चतुर्दशी और श्रावण सुदी नौमी से क्रमशः 9 नौमी के व्रत करने पर णमोकार मंत्र में वर्णित 35 अक्षर के 35 व्रत पूर्ण करना चाहिए।

यदि क्रमशः तिथि से व्रत करने में अनुकूलता न हो तो अपनी सुविधानुसार उक्त तिथियों के व्रत पूर्ण करना चाहिए।

जाप्य :– ॐ ह्रीं श्री अर्हत् सिद्धाचार्य उपाध्याय सर्व साधुभ्यो नमः।

नवलब्धि व्रत (नवकेवललब्धि व्रत)

तीर्थंकर भगवन्तों को जब केवलज्ञान प्रगट हो जाता है तब अर्हंत अवस्था में उन्हें केवललब्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं। दर्शनमोहनीय के अभाव से क्षायिकसम्यक्त्वलब्धि, दर्शनावरण के क्षय से केवलदर्शनलब्धि, अंतरायकर्म के पाँच भेदों में से क्रमशः दानान्तराय के विनाश से अनंतदानलब्धि, लाभान्तराय कर्म के क्षय से अनंतलाभलब्धि, भोगान्तराय के अभाव से अनंतभोगलब्धि, उपभोगान्तराय के नाश से अनंतउपभोगलब्धि और वीर्यान्तरायकर्म के क्षय से अनंतवीर्यलब्धि ये नव केवललब्धि स्वरूप अनंतलब्धियाँ प्रगट हो जाती हैं। इन्हीं नवकेवललब्धियों को प्राप्त करने के लिए इस व्रत को करना है। तीर्थंकर भगवन्तों की केवलज्ञान तिथि या किसी भी तिथि को अथवा अष्टमी, चतुर्दशी आदि को इस व्रत को करना है।

उत्तम विधि में व्रत के पूर्व दिन एक बार शुद्ध भोजन करके व्रत के दिन उपवास करें पुनः पारणा के दिन भी एक भुक्ति करें। व्रत के दिन चौबीस तीर्थंकर की पूजा या अर्हंत परमेष्ठी की पूजा करें। पुनः समुच्चय जाप्य करके व्रत की एक–एक जाप्य करें। नवव्रत पूर्ण होने पर तीर्थंकर भगवन्तों की कल्याणकभूमि की वंदना करें। चौबीस तीर्थंकर विधान करें तथा शक्ति के अनुसार नव–नव उपकरण मंदिर में भेंट करें।

मध्यम विधि में व्रत के दिन एक बार अल्पाहार और जघन्यव्रत में एक बार शुद्ध भोजन–एकाशन करके व्रत करना चाहिए।

समुच्चय मंत्र– ॐ ह्रीं अर्हं नवकेवललब्धिसमन्वितार्हत्परमेष्ठिभ्यो नमः।

प्रत्येक व्रत की पृथक्–पृथक् जाप्य–

1. **ॐ ह्रीं अर्हं क्षायिकसम्यक्त्वलब्धिसमन्वितार्हत्परमेष्ठिभ्यो नमः।**
2. **ॐ ह्रीं अर्हं क्षायिकचारित्रलब्धिसमन्वितार्हत्परमेष्ठिभ्यो नमः।**
3. **ॐ ह्रीं अर्हं केवलज्ञानलब्धिसमन्वितार्हत्परमेष्ठिभ्यो नमः।**
4. **ॐ ह्रीं अर्हं केवलदर्शनलब्धिसमन्वितार्हत्परमेष्ठिभ्यो नमः।**
5. **ॐ ह्रीं अर्हं अनंतदानलब्धिसमन्वितार्हत्परमेष्ठिभ्यो नमः।**
6. **ॐ ह्रीं अर्हं अनंतलाभलब्धिसमन्वितार्हत्परमेष्ठिभ्यो नमः।**
7. **ॐ ह्रीं अर्हं अनंतभोगलब्धिसमन्वितार्हत्परमेष्ठिभ्यो नमः।**
8. **ॐ ह्रीं अर्हं अनंतोपलब्धिसमन्वितार्हत्परमेष्ठिभ्यो नमः।**
9. **ॐ ह्रीं अर्हं अनंतवीर्यलब्धिसमन्वितार्हत्परमेष्ठिभ्यो नमः।**

इस व्रत का फल अर्हंत अवस्था को प्राप्त करना है। परम्परा फल संसार के अनेक प्रकार के अभ्युदय चक्रवर्ती आदि के वैभव तथा स्वर्ग के उत्तम सुखों को प्राप्त करना है। इस व्रत के प्रभाव से दरिद्रता, रोग, शोक आदि दुःख दूर होंगे और परभव में नियम से स्वर्ग आदि के वैभव प्राप्त होंगे। पुनः परम्परा से ये नव केवललब्धियाँ जहाँ प्रगट होती हैं, ऐसे परमात्मपद की प्राप्ति होगी। ***

कल्याण मन्दिर पूजन

स्थापना

कुमुद चन्द आचार्य प्रवर ने, भक्ति का फल पाया था ।
देवों ने खुश होकर अनुपम, चमत्कार दिखलाया था ।।
पार्श्वनाथ की भक्ति का फल, बना शुभम स्त्रोत महान ।
कल्याण मन्दिर नाम पड़ा है, किया गया प्रभु का गुणगान ।।
जिनवर के गुण गाने हेतु, करते उर में आह्वानन ।
विशद भाव से शीश झुकाकर, करते हम शत्-शत् वन्दन ।।

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षर सम्पन्न ! श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्र ! मम हृदये अवतर-अवतर संवौषट्। इत्याह्वाननम्। मम हृदये तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । इति स्थापनम्। मम हृदये सन्निहितो भव-भव वषट् सन्निधिकरणम्। *(परिपुष्पांजलिं क्षिपामी)*

(शम्भू छन्द)

कर्मों का बन्ध अनादि से, मोहित हो करते आए हैं ।
अब नाश हेतु जन्मादि जरा, यह शीतल जल भर लाए हैं ।।
हे नाथ ! आपकी भक्ति से, मेरे सब कर्मो का क्षय हो ।
मम् दुख दरिद्र हों दूर सभी, यह जीवन भी मंगलमय हो।।

ॐ ह्रीं कमठोपद्रव जिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय जन्म, जरा, मृत्यु विनाशनाय जलं निर्व.स्वाहा।

भव आताप में हम अनादि से, दुःखमय हो भटकाए हैं ।
हम नाश हेतु भव ताप पूर्ण, यह चंदन घिसकर लाए हैं ।।
हे नाथ ! आपकी भक्ति से, मेरे सब कर्मो का क्षय हो ।
मम् दुख दरिद्र हों दूर सभी, यह जीवन भी मंगलमय हो।।

ॐ ह्रीं कमठोपद्रव जिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय संसारताप विनाशनाय चंदनं निर्व.स्वाहा ।

क्षण भंगुर जग के वैभव को, पाने में जन्म गंवाए हैं ।
हम अक्षय अक्षत चढ़ा रहे, अक्षय पद पाने आए हैं ।।
हे नाथ ! आपकी भक्ति से, मेरे सब कर्मो का क्षय हो ।
मम् दुख दरिद्र हों दूर सभी, यह जीवन भी मंगलमय हो।।

ॐ ह्रीं कमठोपद्रव जिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अक्षयपद प्राप्ताय अक्षतान् निर्व. स्वाहा ।

हम काम व्यथा से व्यथित हुए, भव दुख से पार न पाए हैं ।
अब काम बाण के नाश हेतु, यह पुष्प चढ़ाने आय हैं ।।
हे नाथ ! आपकी भक्ति से, मेरे सब कर्मो का क्षय हो ।
मम् दुख दरिद्र हों दूर सभी, यह जीवन भी मंगलमय हो।।

ॐ ह्रीं कमठोपद्रव जिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय कामबाण विध्वंशनाय पुष्पम् निर्व.स्वाहा ।।

है क्षुधा व्याधि जग में दुखकर, हम उससे अति अकुलाए हैं ।
हो क्षुधा रोग का नाश प्रभु, नैवेद्य चढ़ाने लाए हैं ।।
हे नाथ ! आपकी भक्ति से, मेरे सब कर्मो का क्षय हो ।
मम् दुख दरिद्र हों दूर सभी, यह जीवन भी मंगलमय हो।।

ॐ ह्रीं कमठोपद्रव जिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय क्षुधारोग विनाशनाय नैवद्यं निर्व.स्वाहा ।

हम मोह महातम के कारण, त्रय लोकों में भटकाए हैं ।
हो मोह अन्ध का नाश पूर्ण, हम दीप जलाकर लाए हैं ।।
हे नाथ ! आपकी भक्ति से, मेरे सब कर्मो का क्षय हो ।
मम् दुख दरिद्र हों दूर सभी, यह जीवन भी मंगलमय हो।।

ॐ ह्रीं कमठोपद्रव जिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय महामोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्व.स्वाहा।

आठों कर्मों के द्वारा हम, भव-भव में खूब सताए हैं ।
अब नाश हेतु उन कर्मों के, यह धूप जलाने लाए हैं ।।
हे नाथ ! आपकी भक्ति से, मेरे सब कर्मो का क्षय हो ।
मम् दुख दरिद्र हों दूर सभी, यह जीवन भी मंगलमय हो ।।

ॐ ह्रीं कमठोपद्रव जिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।

फल की आकांक्षा में हमने, चारों गति के दुःख पाए हैं ।
हो मोक्ष महाफल प्राप्त हमें, हम फल अर्पण को लाए हैं ।।
हे नाथ ! आपकी भक्ति से, मेरे सब कर्मो का क्षय हो ।
मम् दुख दरिद्र हों दूर सभी, यह जीवन भी मंगलमय हो।।

ॐ ह्रीं कमठोपद्रव जिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्ताय फलं निर्व.स्वाहा।

जग वैभव पाकर भटक रहे, निज पद को प्राप्त न कर पाए ।
अब अक्षय पद के हेतु प्रभु, यह अर्घ्य चढ़ाने हम लाए ।।

हे नाथ ! आपकी भक्ति से, मेरे सब कर्मो का क्षय हो ।
मम् दुख दरिद्र हों दूर सभी, यह जीवन भी मंगलमय हो।।

ॐ ह्रीं कमठोपद्रव जिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अनर्घपद प्राप्ताय अर्घ्यं निर्व. स्वाहा ।

जयमाला

सोरठा– है पावन स्तोत्र, श्री कल्याण मन्दिर परम ।
श्रेष्ठ धर्म का स्रोत, पार्श्वप्रभु की भक्ति का ।।

(शम्भू छन्द)

जिनके मुकुट मणि की आभा, से शोभित हैं चरण युगल।
इन्द्र और नागेन्द्र भाव से, झुकते जिनके चरण कमल ।।
कर्म शत्रुओं को कीन्हा है, शांत भाव से पूर्ण शमन ।
निर्विकार होकर जित इन्द्रिय, निज आतम को किया चमन ।।
नयन कमल प्रमुदित करके जो, करते जिनवर का दर्शन ।
सकल गुणों के कोष पार्श्वजिन, के पद में शत्–शत् वन्दन ।।
भव सागर में पतित जनों को, पार हेतु तव एक शरण ।
गुण अनन्त के धारी जिन के, पोत कहे हैं श्रेष्ठ चरण ।।
गुण समुदाय सहित चिद्रूपी, उत्तम गुण गण के धारी ।
भव पाशों के नाशक अनुपम, मुक्ति महल के अधिकारी ।।
गुण हैं रम्यारम्य योग्य शुभ, भवि जीवों से स्तवनीय।
हैं अजेय निर्बन्ध बन्ध से, तीन लोक में अति रमणीय ।।
दुष्ट उपद्रव नाशक अतिशय, आप जगत् के वीर कहे ।
ध्यान योग से कामदेव पर, विजय हेतु महावीर रहे ।।
क्रोध महानल हेतु जल शुभ, महतामति हैं विशद महान ।
मृग्यमाण हृदि गरिमाधारी अनुपम, आप सुगुण की खान ।।
कर्म दाह की तीव्राग्नि अरु, शल्य का पूर्ण विनाश किए ।
जो प्रमाद का नाश किए हैं, आतम तत्त्व प्रकाश किए ।।
विष संस्सृति का नाश किए प्रभु, अमृत धार बहाए हैं ।
सुर नर नाग भूप चरणों की, गंग में बैठ नहाए हैं ।।

तुङ्ग अशोक महीरूह सरिता, पुष्प वृष्टि है महति महान ।
दिव्य ध्वनि योजन तक खिरती, चँवर ढौरते सुरगण आन ।।
तीन पीठिका पर अघनाशक, हरित विभा युत गुण आकर ।
दान वारि दुन्दुभि गान शुभ, आतप वारण रत्नाकर ।।
मणि हेमार्जुन युक्त शाल तिय, शोभित होते हैं मनहार ।
जन तारण में दक्ष रहा है, हत मद कारी विस्मयकार ।।
कमठ ने धूली उत्थापित की, जल वृष्टि की मूशलधार ।
जीते पैशाचिक विप्लव सब, धर्म निष्ठ करते जयकार ।।
जो पवित्र शिव के आनन हैं, जिनवर के पद रहे महान ।
दर्शनीय जो अघ के हर्त्ता, भव्य जीव करते गुणगान ।।
नम्रीभूत हुए भक्ति से, वत्सल–वन्त रहे गुणवन्त ।
भूरि भाग्य के धारी जग में, लोक प्रकाशी जिन अरिहंत ।।
चरणों में नत प्राणी जग के, हो जाते अभिवन्द्य विशेष ।
जन्म मरण से च्युत हो जाते, कर्म नष्ट हो जाएँ अशेष ।।
कुमुदचन्द यतिकृत पद सेवा, करके जीवन बने महान ।
'विशद' भक्ति को पाकर होता, भक्त जनों का भी कल्याण ।।
अश्वसेन आदि की निर्मल, परम्परा आकाश समान ।
सद्भक्तों के लिए चन्द्रमा, धर्म रूप है आभावान ।।
देवेन्द्र कीर्ति द्वारा पूजित, भक्ति भाव से युगल चरण ।
पार्श्वनाथ के पद पंकज में, विशद भाव से करूँ नमन् ।।

दोहा – पार्श्व प्रभु के नाम का, करता है जो जाप ।
सुख शान्ति पावे विशद, काटे अपने पाप ।।

ॐ ह्रीं कमठोपद्रव जिताय श्री पार्श्वनाथ जिनेन्द्राय जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्व.स्वाहा ।

आर्या छन्द– **विप्र बनकर बने राजा, स्वर्ग द्वादश में गये ।**
बने खेचर कल्प अच्युत, निधीपति फिर जो भये ।।
मध्य ग्रीवक इन्द्र बनकर, ईश हो अच्युत गये ।
उग्रवंशी तिलक पारस, जिन प्रभु रक्षक भये ।।

(इत्याशीर्वादः पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

कल्याण मंदिर व्रत विधि

कल्याण मंदिर स्तोत्र भगवान पार्श्वनाथ का स्तोत्र है। इसमें भी आदि में 'कल्याणमंदिरमुदारमवद्य... 'कल्याण मंदिर' पद आ जाने से इसका कल्याणमंदिर स्तोत्र यह सार्थक नाम हो गया है। इसमें 44 काव्य हैं अतः 44 व्रत किये जाते हैं। व्रत के दिन श्री पार्श्वनाथ का अभिषेक करके कल्याण मंदिर यंत्र का भी अभिषेक करें और कल्याण मंदिर की पूजा या श्री पार्श्वनाथ की पूजा करें। इसकी समुच्चय जाप्य निम्न प्रकार है–

ॐ ह्रीं कमठोपसर्गजिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः।

प्रत्येक 44 मंत्र (एक–एक व्रत के दिन क्रम से 1–1 मंत्र की माला फेरें।)

1. **ॐ ह्रीं भवसमुद्रतरणे पोतायमान कल्याणमंदिरस्वरूपाय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
2. **ॐ ह्रीं कमठस्य धूमकेतूपमाय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
3. **ॐ ह्रीं त्रैलोक्याधीशाय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
4. **ॐ ह्रीं सर्वपीड़ानिवारकाय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
5. **ॐ ह्रीं सुखविधायकाय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
6. **ॐ ह्रीं अव्यक्तगुणाय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
7. **ॐ ह्रीं भवाटवीनिवारकाय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
8. **ॐ ह्रीं कर्माहिबन्धमोचनाय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
9. **ॐ ह्रीं सर्वोपद्रवहरणाय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
10. **ॐ ह्रीं भवोदधितारकाय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
11. **ॐ ह्रीं हुतभुग्भयनिवारकाय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
12. **ॐ ह्रीं हृदयधार्यमाणभव्यगणतारकाय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
13. **ॐ ह्रीं कर्मचौरविध्वंशकाय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
14. **ॐ ह्रीं हृदयाम्बुजान्वेषिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
15. **ॐ ह्रीं जन्ममरणरोगहराय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
16. **ॐ ह्रीं विग्रहनिवारकाय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
17. **ॐ ह्रीं आत्मस्वरूपध्येयाय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
18. **ॐ ह्रीं परवादिदेवस्वरूपध्येयाय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**

19. **ॐ ह्रीं अशोकप्रातिहार्योपशोभिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
20. **ॐ ह्रीं पुष्पवृष्टिप्रातिहार्योपशोभिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
21. **ॐ ह्रीं अजरामरदिव्यध्वनिप्रातिहार्योपशोभिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
22. **ॐ ह्रीं चामरप्रातिहार्योपशोभिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
23. **ॐ ह्रीं सिंहासनप्रातिहार्योपशोभिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
24. **ॐ ह्रीं भामण्डलप्रातिहार्यप्रभास्वते श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
25. **ॐ ह्रीं दुन्दुभिप्रातिहार्योपशोभिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
26. **ॐ ह्रीं छत्रत्रयप्रातिहार्यविराजिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
27. **ॐ ह्रीं (शालत्रय) वप्रत्रयविराजिताय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
28. **ॐ ह्रीं पुष्पमालानिषेवितचरणाम्बुजाय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
29. **ॐ ह्रीं श्री संसारसागरतारकाय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
30. **ॐ ह्रीं अद्भुतगुणविराजितरूपाय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
31. **ॐ ह्रीं रजोवृष्ट्यक्षोभ्याय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
32. **ॐ ह्रीं कमठदैत्यमुक्तवारिधाराक्षोभ्याय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
33. **ॐ ह्रीं कमठदैत्यप्रेषितभूतपिशाचाद्यक्षोभ्याय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
34. **ॐ ह्रीं त्रिकालपूजनीयाय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
35. **ॐ ह्रीं आपन्निवारकाय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
36. **ॐ ह्रीं सर्वपराभवहरणाय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
37. **ॐ ह्रीं सर्वमनर्थमथनाय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
38. **ॐ ह्रीं सर्वदुःखहराय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
39. **ॐ ह्रीं जगज्जीवदयालवे श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
40. **ॐ ह्रीं सर्वशांतिकराय श्रीजिनचरणाम्बुजाय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
41. **ॐ ह्रीं जगन्नायकाय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
42. **ॐ ह्रीं अशरणशरणाय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
43. **ॐ ह्रीं चित्तसमाधि सुसेविताय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**
44. **ॐ ह्रीं परमशांतिविधायकाय श्री पार्श्वनाथाय नमः।**

चैत्य वंदना

-आचार्य विशदसागर

चैत्य वंदना करने को हम, चैत्यालय आए।
प्रमुदित मन से अष्ट द्रव्य यह हाथों में लाए।।
प्रभु की वीतराग छवि लख के, राग विलय होवे।
अर्चा करने से कर्मों का, शीघ्र सुक्षय होवे।।
कर्मों का क्षय करने के हम विशद भाव भाए। चैत्य वंदना.....।।1।।

दर्शन है सोपान स्वर्ग का, मुक्ती का साधन।
श्री जिनेन्द्र का दर्शन करना, साधू पद वन्दन।।
ज्यों हाथों में जल न रुकता, कर्म न रह पाए। चैत्य वंदना.....।।2।।

नित्य निरंजन भव भय भंजक, जिनवर को जानो।
वीतराग निर्ग्रन्थ निरम्बर, अविकारी मानो।।
दर्शन करके सम्यक् दर्शन, भाई हो जाए। चैत्य वंदना.....।।3।।

हे जिनेन्द्र ! हे सिद्ध सनातन, तव मुद्रा प्यारी।
प्रातिहार्ययुत जिनबिम्बों की महिमा है न्यारी।।
दर्शन करके समवशरण के प्राणी हर्षाए। चैत्य वंदना.....।।4।।

भवनवासियों के भवनों में, चैत्यालय गाए।
वान व्यन्तर के चैत्यालय, भी कुछ बतलाए।।
जो परोक्ष ही करें वन्दना, वह भी फल पाए। चैत्य वंदना.....।।5।।

स्वर्ग विमानों में चैत्यालय, होते शुभकारी।
पञ्चमेरु नन्दीश्वर आदि, की महिमा न्यारी।।
जम्बूवृक्ष शाल्मलि में भी, चैत्यालय गाए। चैत्य वंदना.....।।6।।

अर्हत् सिद्धाचार्य उपाध्याय साधू अविकारी।
परमेष्ठी हैं पञ्च हमारे रत्नत्रय धारी।।
'विशद' वंदना करने अनुपम हर्ष हृदय छाए। चैत्य वंदना.....।।7।।

समाधि भक्ति

-आचार्य विभवसागरजी महाराज

तेरी छत्रछाया भगवन्, मेरे सिर पर हो।
मेरा अंतिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो।।

जिनवाणी रसपान करूँ मैं, जिनवर को ध्याऊँ।
आर्यजनों की संगति पाऊँ, व्रत संयम चाहूँ।।
गुणीजनों के सद्गुण गाऊँ, जिनवर यह वर दो।
मेरा अंतिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो।।1।।

परनिंदा न मुँह से निकले, मधुर वचन बोलूँ।
हृदय तराजू पर हितकारी, संभाषण तोलूँ।।
आत्म तत्त्व की रहे भावना, भाव विमल भर दो।
मेरा अंतिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो।।2।।

जिनशासन में प्रीति बढ़ाऊँ, मिथ्यापथ छोड़ूँ।
निष्कलंक चैतन्य भावना, जिनमत से जोड़ूँ।।
जन्म-जन्म में जैन धर्म, यह मिले कृपा कर दो।
मेरा अंतिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो।।3।।

मरण समय गुरु पादमूल हो, संत समूह रहे।
जिनालयों में जिनवाणी की, गंगा नित्य बहे।।
भव-भव में सन्यासमरण हो, नाथ हाथ धर दो।
मेरा अंतिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो।।4।।

बाल्यकाल में अब तक मैंने, जो सेवा की हो।
देना चाहो प्रभो आप तो, बस इतना फल दो।।
श्वांस-श्वांस अंतिम श्वांसों में, णमोकार भर दो।
मेरा अंतिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो।।5।।

विषय कषायों को मैं त्यागूँ, तजूँ परिग्रह को।
मोक्षमार्ग पर बढ़ता जाऊँ, नाथ अनुग्रह हो।।
तन पिंजर से मुझे निकालो, सिद्धालय घर दो।।
मेरा अंतिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो।।6।।

भद्रबाहु सम गुरु हमारे, हमें भद्रता दो।
रत्नत्रय संयम की शुचिता, हृदय सरलता दो।।
चन्द्रगुप्त सी गुरु सेवा का, पाठ हृदय भर दो।
मेरा अंतिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो।।7।।

अशुभ न सोचूँ, अशुभ न चाहूँ, अशुभ नहीं देखूँ।
अशुभ सुनू ना, अशुभ कहूँ ना, अशुभ नहीं लेखूँ।।
शुभ चर्या हो, शुभ क्रिया हो, शुद्ध भाव भर दो।।
मेरा अंतिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो।।8।।

तेरे चरण कमल द्वय जिनवर, रहे हृदय मेरे।
मेरा हृदय रहे सदा ही, चरणों में तेरे।।
पंडित-पंडित मरण हो मेरा, ऐसा अवसर दो।।
मेरा अंतिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो।।9।।

मैंने जो जो पाप किए हों, वह सब माफ करो।
खड़ा अदालत में हूँ स्वामी, अब इंसाफ करो।।
मेरे अपराधों को गुरुवर, आज क्षमा कर दो।
मेरा अंतिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो।।10।।

दुःख नाश हो कर्म नाश हो, बोधि लाभ वर दो।
जिन गुण से प्रभु आप भरे हो, वह मुझमें भर दो।
यही प्रार्थना यही भावना, पूर्ण आप कर दो।
मेरा अंतिम मरण समाधि, तेरे दर पर हो।।11।।

* * *

भजन

अब सौंप दिया इस जीवन का, सब भार तुम्हारे हाथों में।
है जीत तुम्हारे हाथों में, और हार तुम्हारे हाथों में।। सरकार तुम्हारे हाथों में..
जो जग में रहूँ तो ऐसे रहूँ, ज्यों जल में कमल का फूल रहे।
मेरे सब गुण-दोष समर्पित हों, भगवान तुम्हारे हाथों में।। सरकार तुम्हारे हाथों में..
यदि मानुष का मुझे जन्म मिले, तो तव चरणों का भक्त बनूँ।
इस पूजक की इक-इक रग का, हो तार तुम्हारे हाथों में।। सरकार तुम्हारे हाथों में..
मेरा निश्चय बस एक यही, एक बार तुम्हें पा जाऊँ में।
अर्पण करदूँ दुनियाँ भर का, सब प्यार तुम्हारे हाथों में।। सरकार तुम्हारे हाथों में..
मुझमें तुझमें बस भेद यही, मैं नर हूँ तुम नारायण हो।
मैं हूँ संसार के हाथों में, संसार तुम्हारे हाथों में।। सरकार तुम्हारे हाथों में..
जब-जब संसार का कैदी बनूँ, निष्काम भाव से कर्म करूँ।
फिर अंत समय में प्राण तजूँ, निराकार तुम्हारे हाथों में।। सरकार तुम्हारे हाथों में..

भजन (तर्ज-आसरा इस जहाँ....)

आज कर लो प्रतिज्ञा सभी मिल यहाँ, देव दर्शन को हम सब सदा जायेंगे।
छान करके ग्रहण जल करेंगे स्वयं, रात्रि भोजन कभी हम नहीं खायेंगे।।
जैनियों जैन बनकर रहो तुम सदा, वीर का श्रेष्ठ यह एक संदेश है।
गुरू सेवा करो नितप्रति अय 'विशद', जैन आगम का वश यही उपदेश है।।
जैन आगम का नितप्रति करेंगे पठन, संयम पालन से जीवन सजायेंगे हम।
अनशनादि सुतप धारकर के महाँ, कर्म का भार हमको भी करना है कम।।
स्वपर उपकार करना कहा धर्म है, श्रेष्ठ मानव के अपने ये कर्त्तव्य हैं।
इन गुणों से सहित जो भी संसार में, श्रेष्ठ गुणवान मानव कहे श्रेष्ठ है।।
जो विशद ज्ञान तप दान से हीन हैं, शीलगुण से रहित जमीं पर भार हैं।
श्रेष्ठ जीवन बिताते जो संयम सहित, देव साक्षात् वह सन्त अनगार हैं।।
हम बढ़ेंगे स्वयं मोक्ष की राह पर, बस सहारा स्वयं का इक संकल्प है।
जिन्दगी का भरोसा नहीं है 'विशद', हमें जीवन मिला वह भी तो अल्प हैं।।

क्षमा वंदना

क्षमा करना क्षमा करना, क्षमा शांति का दाता है।
क्षमा के भाव से प्राणी, 'विशद' मुक्ति को पाता है।।
क्षमा करता सकल जन को, क्षमा करना सभी मुझको।
अभी छदमस्थ हूँ मैं भी, नहीं है ज्ञान कुछ मुझको।।
रहे मैत्री सभी जन से, किसी से बैर न मेरा।
हृदय में भावना मेरी, किसी से हो नहीं फेरा।।
क्षमा करना क्षमा करना, क्षमा ही जग का त्राता है।
क्षमा के भाव से प्राणी, 'विशद' मुक्ति को पाता है।।
पाप का कर सकें छेदन, रहे यह भाव में वेदन।
क्षमा उनसे भी चाहूँगा, मेरे हाथों हुए भेदन।।
त्याग दूँ दोष इस जग के, यही है भावना मेरी।
पटे खाई हृदय की जो, बनी हो पूर्व से तेरी।।
क्षमा करना क्षमा करना, क्षमा समता को लाता है।
क्षमा के भाव से प्राणी, 'विशद' मुक्ति को पाता है।।
दया मय भाव हो जावें, हृदय करुणा से भर जावे।
रहे भावों में शीतलता, कभी भी क्रोध न आवे।।
क्षमा की तरणी बह जावे, सदा मैं भाव करता हूँ।
क्षमा भूषण है तन मन का, उसे मैं आप धरता हूँ।।
क्षमा करना क्षमा करना, क्षमा उर में समाता है।
क्षमा के भाव से प्राणी,'विशद' मुक्ति को पाता है।।
कभी जाने या अनजाने, हुए हों दोष जो मेरे।
क्षमा हमको सभी करना, बड़े उपकार हों तेरे।।
वीर का धर्म ये कहता, हृदय में शांति तुम धरना।
क्षमा धारण 'विशद' दिल में कि अर्पण प्राण तुम करना।।
क्षमा करना क्षमा करना, क्षमा को धर्म गाता है।
क्षमा के भाव से प्राणी,'विशद' मुक्ति को पाता है।।

।। इति समाप्तम् ।।

सुगन्ध दशमी व्रत विधि

इस व्रत की विधि इस प्रकार है कि **भादों सुदी दशमी के दिन चारों प्रकार के आहारों को त्यागकर समस्त गृहारम्भ का त्याग करें और परिग्रह का भी प्रमाणकर जिनालय में आकर श्री जिनेन्द्रदेव की भाव सहित अभिषेकपूर्वक पूजा करें।** सामायिक स्वाध्याय करें। धर्म कथा के सिवाय अन्य विकथाओं का त्याग करें, रात्रि में भजनपूर्वक जागरण करें। पश्चात् दूसरे दिन चौबीस तीर्थंकरों की अभिषेकपूर्वक पूजा करके अतिथियों (मुनि व श्रावक) को भोजन कराकर आप पारणा करे। चारों प्रकार के दान देवें। इस प्रकार दस वर्ष तक यह व्रत पालन कर पश्चात् उद्यापन करें।

अर्थात् चमर, छत्र, घण्टा, झारी, ध्वजा आदि दश-दश उपकरण जिनमंदिरों में भेंट देवें और दश प्रकार के श्रीफल आदि फल दश घर के श्रावकों को बाँटे। यदि उद्यापन की शक्ति न होवे, तो दूना व्रत करें।

उत्तम व्रत उपवास करने से, मध्यम कांजी आहार और जघन्य एकाशन करने से होता है।

इस व्रत के दिन श्री शीतलनाथ भगवान की पूजा करें एवं **''ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं श्री शीतलनाथ जिनेन्द्राय नमः''** मंत्र का जाप्य करें।

❋❋❋